मतपरीक्षा

अर्थात्

दो महापण्डितों के सत्सङ्ग

प्रथम खण्ड

भारतीयशास्त्रनिरूपण

AGRA:

PRINTED AT THE SECUNDRA ORPHAN PRESS,

FOR THE AGRA TRACT SOCIETY.

HINDI SERIES No. XXII.

1st Ed.] 1856. [1,500 Copies.

Price four annas. मोल ।) आना

सूचीपत्र

मतपरीक्षा

अर्थात्

दो महापण्डितों के सत्सङ्ग ।

पहिला सत्सङ्ग ।

मतपरीक्षा की उचित रीति की चर्चा ।

ग्रन्थकर्त्ता का वचन ।

हिन्दुस्थान के समस्त नगरों में काशी नगर अति प्रसिद्ध है । वहां बड़े २ राजग्रह मन्दिर आदि जिनकी चोटियां आकाश को छू रही हैं अत्यन्त सुन्दर और शोभायमान बनी हैं। उस में बड़े २ श्रीमन्त लखपति करोड़पति बास करते हैं और उसके महापण्डितों का यश सारे संसार में फैल गया है ॥

एक समय उस नगर के बड़े पण्डितों में एक मनुष्य था जिस का नाम वेदविद्वान् था वुह ऐसा ज्ञानी था कि सम्पूर्ण शास्त्रों को भली भांति जानता था और जैसा ज्ञानी को योग्य है वुह अति सभ्य दयालु शुद्धस्वभाव और निर्पक्ष भी था निदान सत्य असत्य का बिचारी था । अब एक दिन बसन्त ऋतु में ऐसा हुआ कि वुह मनुष्य भोर उठ बिधि के अनुसार स्नान आदि सर्व कर्म से निश्चिन्त हो गङ्गा के तीर पर एक पीपल की छाया में बैठा हुआ मन्द २ ठंडी २ पवन से मगन हो रहा था । इतने

में एक सज्जन काशी निवासी जिसका नाम सत्यार्थी था उसके समीप आया। यह मनुष्य पश्चिमदेश का एक महापण्डित था और बड़ा धर्मी सूक्ष्म बातें का विवेकी देश २ के भिन्न मतें का जाननेवाला भी था। सो यह भी गङ्गा के तीर पर हो वेदविद्वान् का सुयश जान उसके समीप आ बड़े आदर और शिष्टाचार के साथ उसका प्रणाम कर उसके सङ्ग सम्वाद करने लगा॥

उस समय इनका सत्सङ्ग नाना प्रकार के बिषयें पर हो चला। परन्तु अन्त में दोनें मनुष्य परम पुरुषार्थ के खोजक हो उस भारी प्रकरण की चर्चा में प्रवृत्त हुए। सो मैं भी उस काल उनके पास बैठ परमार्थ के बिषय में उनके परस्पर प्रश्नोत्तर और तरक प्रमाण सुन अति आनन्दित था। इस कारण अब बिस्तार के साथ उसका वृत्तान्त प्रगट करता हूं॥

सत्यार्थी का वचन॥

बहुत दिनें से मैं ने आप का यश सुना है कि आप बड़े गुणवान् हैं। इस कारण आप की भेट होने से मैं अति आनन्दित हूं। सुनने में आया है कि आप अपने देश के समस्त शास्त्रों में निपुण हैं इसलिये मेरी इच्छा है कि आप अपने ज्ञान का कुछ बर्णन कीजिये॥

वेदविद्वान् का वचन॥

अपनी युवावस्था से मैं उन शास्त्रों का अभ्यास करता रहा हूं जिनका बिशेष करके इस देश में सन्मान है। पुराणों और इतिहासें का भी मैं ने पढ़ लिया है जिस्तें देवताओं का चरित्र भली भांति जानूं। परन्तु शरीर बिशेष बस्तुओं की अनर्थकता

को ध्यान करते २ अब मेरा मन वेदान्त से अधिक प्रसन्न और सन्तुष्ट है। क्योंकि उस शास्त्र में ब्रह्म के परमज्ञान की चर्चा है और उसके द्वारा मुक्तिरूप परमार्थ प्राप्त होता है ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

आप जब इस संसार के समस्त बिषयों को अनर्थ ठहराते हैं इस में मेरी भी सम्मति निश्चय जानिये। मेरी समझ में परमेश्वर का ज्ञान सब और बस्तुओं से उत्तम और मुक्ति सारे पुरुषार्थों से श्रेष्ठ है। इस कारण मेरी इच्छा है कि इस भारी प्रकरण में आप का सम्पूर्ण मत और उसका प्रमाण भी बिस्तार के साथ समझूं। और पहिले शास्त्रों का यथार्थ बर्णन करना आप को उचित होगा क्योंकि शास्त्र के बिना ईश्वरीयज्ञान प्राप्त करना बहुधा कठिन है। इसलियें जो प्रधान शास्त्र भारतखण्ड में प्रचलित हैं किस रीति से प्रमाणिक ठहरते हैं आप इसका वर्णन कीजिये ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

वेद आदि सब शास्त्र ब्रह्मा के मुख से निकले। यह सिद्धान्त पुराणों में जो ज्ञान के भण्डार हैं स्पष्ट रीति से लिखा है ॥

जैसा भागवत के तीसरे स्कन्ध के बारहवें अध्याय में लिखा है ॥

कदाचिद्ध्यायतः स्रष्टुर्वेदा आसंश्चतुर्मुखात्
कथं स्रक्ष्याम्यहं लोकान् समवेतान् यथा पुरा ॥ ३४ ॥

अर्थात् एक समय सृष्टकर्त्ता के चारों मुख से वेद उत्पन्न हुए। जब वुह ध्यान करता था कि लोकों के समूह को आगे के समान मैं किस प्रकार से रचूं ॥

फिर ३० और ३९ श्लोक में यों लिखा है ॥

ऋग्यजुस्सामाथर्वाख्यान् वेदान् पूर्वादिभिर्मुखैः।
शस्त्रमिज्यां स्तुतिस्तोमं प्रायश्चित्तं व्यधात् क्रमात् ॥ ३० ॥
इतिहासपुराणानि पञ्चमम्वेदमीश्वरः
सर्वेभ्य एव वक्त्रेभ्यः ससृजे सर्वदर्शनम् ॥ ३९ ॥

अर्थात् ईश्वर ने अपने पूर्वादि मुखों से ऋग यजु साम अथर्वण वेदों को शस्त्र यज्ञ स्तुति प्रायश्चित्त को क्रम से रचा। और पुराणरूपी इतिहास पांचवें वेद को और सर्वदर्शन को भी समस्त मुखों से सिरजा ॥

जिन शास्त्रों को ईश्वर ने आप रचा है हे मित्र उनके प्रमाणिक होने में किस प्रकार से तनिक भी सन्देह हो सक्ता है ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

जब दो जनों के बीच किसी प्रकार का विवाद है तो बिचारी पुरुष ऐसा मानते हैं कि पराई साची के बिना निरकेवल वादी अथवा प्रतिवादी के साची अपने ही प्रकरण में बिश्वास योग्य नहीं हैं। इस रीति से हे महापण्डितजी शास्त्रों का प्रमाणिक होना उन्हीं शास्त्रों के वचनमात्र से सिद्ध नहीं हो सक्ता। जब पहिले शास्त्र ही का प्रमाण सिद्ध हो चुका तब शास्त्र का वचन प्रमाण के लिये काम आता है। इसी कारण मैं आप से पूछता हूं कि वेद आदि शास्त्रों के प्रमाणिक होने पर जो शङ्का बौद्धमतावलम्बी इत्यादि करते हैं इन शङ्काओं को वेदान्ती किन प्रमाणों से दूर करते हैं ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

बौद्ध आदि लोगों के जो सन्देह आप बर्णन करते हैं उनके मिटाने के लिये प्रमाण तो हैं। परन्तु जिन शास्त्रों को सारे

संसार ने सनातन से ईश्वरवाणी मान लिया है उन पर सन्देह करना अथवा सन्देह और दूषण का वचन सुनना हे मित्र इस में क्या लाभ हो सक्ता है ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

आप जब यह कहते हैं कि हिन्दू शास्त्रों को सारे संसार ने सनातन से ईश्वरवाणी मान लिया है तो इस में आप का वचन यथार्थ दशा से ठीक नहीं मिलता है । क्योंकि हिन्दुओं को छोड़ उन शास्त्रों को ईश्वरवाणी कोई नहीं मानता है । और हिन्दुओं से अधिक इस संसार में अनेक जाति के मनुष्य हैं । यहां लों कि एक २ हिन्दू के पीछे दूसरी जातियों के दश २ बारह २ मनुष्य उपस्थित हैं और इन में से एक भी उन शास्त्रों को नहीं मानता है। इस दशा में क्या आप को दूसरे प्रकार से कहना न चाहिये अर्थात् कि हिन्दुओं को छोड़ सारा संसार उन शास्त्रों को तरक करता है ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

परमेश्वर ने हिन्दू शास्त्रों को दूसरी जाति के मनुष्यों के लिये नहीं दिया निरकेवल हिन्दुओं के लिये दिया । इस कारण उन का मानना अन्य जातियों को प्रयोजन नहीं है। प्रत्येक जाति को उचित है कि जो २ शास्त्र परमेश्वर ने उनके पितरों को दिया है और जो २ शास्त्र एक २ ने अपने पितरों से पाया है उस पर स्थिर रहना ऐसे शास्त्र के प्रमाण पर सन्देह करना मेरी समझ में बड़ा पाषण्ड है ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

आप इस बात को ध्यान कीजिये कि सत्य असत्य के बिचार करने में जब लों किसी बिषय का तत्वज्ञान प्राप्त नहीं हुआ

तब लों उसका सन्देह बुद्धि में रहता है। और उस सन्देह को दूर करने के लिये कोई प्रमाण अवश्य चाहिये। अब न्याय-शास्त्र में प्रमाण चार प्रकार का लिखा है अर्थात् प्रत्यक्ष अनुमान उपमान और शब्द। इसलिये मैं आप से पूछता हूं कि जो आपने अभी कहा है सो इन चार प्रकारों में किस प्रकार का प्रमाण है॥

वेदविद्वान् का वचन॥

आपने तो ठीक कहा है कि चार प्रकार के प्रमाण हैं। और वुह जो मैं ने कहा अर्थात् कि अपने पितरों के शास्त्र पर स्थिर रहना चाहिये सो शब्द प्रमाण है। क्योंकि न्यायशास्त्र में लिखा है कि आप्तवाक्यं शब्दः। अर्थात् शब्द प्रमाण किसी बिश्वास योग्य का वाक्य है। फिर यह भी लिखा है॥

वाक्यं द्विविधं वैदिकं लौकिकञ्च। वैदिकमीश्वरोक्त-त्वात्सर्वमेव प्रमाणं। लौकिकं तु आप्तोक्तप्रमाणम्॥

अर्थात् वाक्य दो प्रकार का है वैदिक और लौकिक। वैदिक ईश्वर का वचन होके आप ही सर्वथा प्रमाण है। परन्तु लौकिक जब किसी बिश्वास योग्य का वचन है तभी प्रमाण है। इस रीति से अपने पितरों का शास्त्र वैदिक वाक्य मानना शब्द प्रमाण से उचित देख पड़ता है। क्योंकि यद्यपि पितरों का वचन लौकिक वाक्य तो है तथापि आप्तोक्तप्रमाण अर्थात् बिश्वास योग्य का वचन भी है॥

सत्यार्थी का वचन॥

क्या आप ऐसा मानते हैं कि प्रत्येक मनुष्य को अपने पिता के सारे वचन समस्त बिषयों में सर्वथा बिश्वास योग्य और भूल

रहित समझना चाहिये। क्योंकि इस रीति से पिता का वचन वैदिकवाक्य के समान ठहरता और पिता आप एक प्रकार का ईश्वर बन जाता और इस दशा में वेद शास्त्र का क्या प्रयोजन होता॥

वेदविद्वान् का वचन॥

नहीं। पिता का वचन लौकिक वाक्य तो है क्योंकि पिता भी अपने पुत्र के समान मनुष्य होके भूल कर सक्ता है। इस कारण यद्यपि पिता का आदर करना चाहिये तथापि समस्त और बिषयों में उसके वचन का बिचार करना कि ठीक है कि नहीं कुछ आदर के बिरुद्ध नहीं है। परन्तु शास्त्र और धर्म्म के बिषय में जो पिता का वचन बिश्वास योग्य न हो तो किसका वचन बिश्वास योग्य हो सक्ता है॥

सत्यार्थी का वचन॥

आप इस बात को बतलाइये कि जब और बिषयों में बिना बिचार किये पिता का वचन बिश्वास योग्य और भूल रहित ठहर नहीं सक्ता है तो शास्त्र और धर्म्म के बिषय में क्योंकर प्रमाण ठहरेगा। यदि यह दशा है तो सत्य और असत्य दोनों का प्रमाण होगा। क्योंकि प्रसिद्ध बात है कि कितनों के पिता नास्तिक हैं और यदि पिता का वचन प्रमाण ठहरता तो नास्तिक मत भी सत्य ठहरता और नास्तिक के पुत्र को उस मत पर चलना उचित होगा। परन्तु कौन सत्य बिचारी यह मान सक्ता है॥

वेदविद्वान् का वचन॥

आप का वचन तो ठीक है कि उनके लिये जिनके पिता नास्तिक हैं बड़ा कठिन है। परन्तु यदि सब कोई अपने पितरों

के धर्म्म का प्रामण पूछने लगे ते क्या यह दशा बड़ी अधर्म्म का कारण न ठहरेगी ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

यदि धर्म्म सत्य और शास्त्र प्रमाणिक है ते इस बात के जांचके प्रगट करना अधर्म्म का कारण क्योंकर ठहर सक्ता। इसके बिरुद्ध मेरी समझ में वुह धर्म्म और वुह शास्त्र जिस में प्रमाण पूछना और परख लेना बर्ज्जित है से ही धर्म्म इस लक्षण से अपने के निष्प्रमाण और असत्य प्रगट करता है। क्योंकि शास्त्र और धर्म्म का अभिप्राय मनुष्य की प्रकृति के सुधारना और परलोक के लिये सिद्ध करना है। इस कारण जो शास्त्र और धर्म्म परमेश्वर ने किसी के लिये ठहराया हो सो उसके प्रकृति सिद्ध गुण के बिरुद्ध नहीं हो सक्ता है। बरन ऐसा होगा जिस में बुद्धि के साधन से और मन के अभ्यास से उसके आत्मा का सुधराव होवे। क्योंकि मनुष्य की बुद्धि भी परमेश्वर की कृत है और नहीं हो सक्ता है कि परमेश्वर कोई ऐसा धर्म्म अथवा शास्त्र देवे जो उसके कृत के बिरुद्ध है। परमेश्वर किसी प्रकार की बिरुद्धता नहीं करता। इस कारण मतपरीक्षा के लिये उचित रीति पर बुद्धि का साधन करना और बुद्धि का प्रमाण जांच लेना अधर्म्म ते नहीं है मूल धर्म्म है। क्योंकि परमेश्वर सत्य होके निरकेवल सत्य से प्रसन्न होता है। और सत्य असत्य के बिचार करने के लिये बुद्धि का साधन करना मनुष्य जाति के अवश्य है ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

यदि आप का वचन कदाचित् साधारण मनुष्यों के लिये ठीक और ग्रहण के योग्य न ठहरता तथापि आप के सङ्ग इस

पर चलने में मुझको कुछ डर अथवा सन्देह नहीं है। क्योंकि न्याय सूत्र का टीकाकर्त्ता बिश्वनाथ पण्डित का यह वचन है॥

वादाधिकारिणस्तु तत्वबुभुत्सव :॥

अर्थात् वाद करने के योग्य वे हैं जो निरकेवल तत्व जानने की इच्छा रखते हैं। परन्तु जैसा आपने कहा है। ऐसे भारी प्रकरण में निपट अवश्य है कि अपनी बुद्धि का साधन उचित रीति से करें। नहीं तो सत्यता का रत्न पाने की सन्ती हम मिथ्यता के अन्धकार रूपी बन में भटकते फिरेंगे॥

सत्यार्थी का वचन॥

हे महाशय इस बिषय में आप का वचन बहुत ही ठीक और योग्य है और सत्य जानने के लिये उसको मानना अति अवश्य है। क्योंकि सर्वत्र संसार में अनेक प्रकार के मत देख पड़ते हैं और विद्यावान् लोग इस भेद के अनेक कारण भी जानते हैं॥ जैसे॥

१ मनुष्य की बुद्धि को यद्यपि ज्ञान की शक्ति तो है तथापि यह शक्ति अपनी प्रकृति ही से परिमित है। और इस कारण गूढ़ बिषयों को सम्पूर्ण रूप से समझ नहीं सक्ती है। इस दशा में ऐसे बिषयों की भिन्न २ समझ मनुष्यों में अवश्य पड़ेगी॥

२ जिन लोगों को सामान्य से अधिक प्रमाण बिचारने की शक्ति है बहुधा किसी बुरी इच्छा के कारण उनकी बुद्धि की खराई बिगड़ जाती है। कधी २ पण्डित और ज्ञानी भी काम क्रोध द्वेष आदि के वश में होके किसी अभिप्राय के हेतु से एक ऐसे पक्ष को पकड़ लेते हैं जो ध्यान करने से दोषी और असत्य ठहरता। अपना अर्थ खोलने के लिये मैं दो एक दृष्टान्त कहूंगा॥ जैसा॥

वुह तरुण जो वेश्याओं की सङ्गत आदि दुष्टताओं में प्रवृत्त रहता है सो अपना आनन्द भोग करने में जो अटकाव पड़ता है उस से अत्यन्त द्वेष करता है। अब ईश्वरोक्त शास्त्र में दुष्टता बर्ज्जित है और उसका फल नरक का भयानक दण्ड भोग करना निश्चित है। इस कारण दुष्ट तरुण जब शास्त्र का निषेध सुनता तब अपने काम से मोहित हो उस शास्त्र से जिस से उसका आनन्द रुक जाता है अति द्वेष करता है। फिर कधी २ आनेवाले दुःख का चेतन भी उसके मन में आके उसकी अभिलाषा के समस्त बिषयों को फीका कर डालता है। तब वुह इस बात को ध्यान करके कि जो मैं नास्तिक मत को ग्रहण करूं तो मेरे आनन्द को कुछ अटकाव न होगा ईश्वरोक्त शास्त्र को घिनोना जानके तरक करने चाहता है। इस दशा में जब वुह उस शास्त्र का प्रमाण जांचने लगता है तो अपने पक्ष के मारे उसका सत्य बिचार किस प्रकार से कर सक्ता है। इस रीति से कितने मनुष्य राग आदि के जो खरी बुद्धि को बिगाड़ डालती है आधीन हो प्रमाणिक ईश्वरोक्त शास्त्र को तरक करते हैं॥

फिर एक दूसरे शास्त्र का दृष्टान्त कहता हूं जिस में और मिथ्या शिक्षा के सङ्ग यह भी लिखा हो। अर्थात् कि कामुकता आदि दुष्टता जो है सो दान पुण्य करने से मोक्ष होती है। इस दशा में कामातुर जन कहेगा कि इस मत के अनुसार पाप मोक्षण सहज है। अपनी दुष्टता को छोड़ना किस लिये प्रयोजन है। इस कारण उस शास्त्र से जो उसकी मनोभिलाषा को अनुमति देता है आनन्दित है और उसको तरक करना नहीं चाहता है॥

फिर वुह मनुष्य जो अपने देश के शास्त्र को छोड़के किसी दूसरे को ग्रहण करता है सो बहुधा उसके स्वदेशीय उसकी बड़ी

अपनिन्दा करते हैं। इस कारण मनुष्य अन्य शास्त्र के ग्रहण करने से जो क्षेश और निन्दा होती है देखके बहुधा अन्य शास्त्रों से द्वेष करते हैं। और इस चिन्ता से कि क्या जाने सच्चे होवें उनका प्रमाण कभी बिचार नहीं करते हैं। अथवा यदि थोड़ा देखें भी तथापि द्वेष के मारे निरकेवल दूषण करने के लिये देखते हैं और उनका सत्य बिचार नहीं करते हैं। यद्यपि वुह अन्य देश का शास्त्र दृढ़ प्रमाणों से भी स्थापित होवे तथापि पक्ष के कारण उन प्रमाणों का बल अङ्गीकार नहीं करते॥

फिर जो कोई अपनी युवावस्था से किसी धर्म्म में प्रवृत्त रहा है सो उसको बहुत प्यार करके शीघ्र नहीं छोड़ देता है। जैसे कोई माता अपने खण्डित बालक को सुन्दर जानती है तैसे वे अपने धर्म्म में यद्यपि बुरा भी हो कोई दोष नहीं देख सक्ते हैं। और यद्यपि सर्वथा निष्प्रमाण भी हो तथापि उसका पक्ष करके वे उसका निष्प्रमाण होना नहीं मानते हैं॥

इन कारणों से हे पण्डितजी हमको उचित है कि इस सम्वाद में बड़ी अभिलाषा के सङ्ग निर्मल सत्य का खोज करें॥

वेदविद्वान् का वचन॥

समस्त वादों में बुद्धिमान् जन बड़ी सावधानी के सङ्ग चलेगा। क्योंकि सत्य बात के प्राप्त करने में अनेक अटकाव पड़ते हैं। जो कुछ आपने अभी कहा है सो बहुत ही यथार्थ है और आप को निश्चय करना चाहिये कि मैं इसको ग्रहण करता हूं। निर्मल सत्य को प्राप्त करना मैं भी अति अवश्य जानता हूं। इसके बिना हमको इस लोक में और परलोक में भी असीम हानि होगी। हमको उचित है कि बुद्धि के उस नेत्र से जिसे परमेश्वर ने हमको और सारे मनुष्यों को दिया है सत्यता के चोखे मोती

का बड़े उद्योग के साथ खोज करें। परन्तु अब दिन बहुत चढ़ा है और घाम से कष्ट होता है। इस कारण मैं आप से बिज्ञप्ति करता हूं कि जो आप की इच्छा हो तो सांज काल जब सूर्य्य अस्त होने पर हो हम इसी स्थान पर इस भारी बिषय की चर्चा करेंगे ॥

ग्रन्थकर्त्ता का वचन ॥

इस पर ये दोनों पण्डित अपने २ स्थान पर प्रस्थित हुए। और मैं भी अपने घर को सिधारा ॥

मतपरीक्षा का प्रथम सत्सङ्ग समाप्त हुआ ॥

इति ॥

दूसरा सत्सङ्ग ॥

वेदों की चर्चा ॥

ग्रन्थकर्त्ता का वचन ॥

उसी दिन सांझ काल को जब सूर्य्य अस्त होने पर था मैं फिर उसी स्थान को जिस में भोर के समय वेदविद्वान् और सत्यार्थी सम्वाद करते थे चला गया। वहां पहुंचके मैं ने देखा कि ये दो बड़े पण्डित उस पीपल की छाया में बैठे हुए सत्सङ्ग करते हैं। तब मैं उनको प्रणाम कर उन से आज्ञा पाय उनके पास बैठ आगे की रीति उनका सम्वाद सुनने लगा ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

हे पण्डितजी आगे के सम्वाद से प्रगट हुआ कि हम दोनों सत्य का खोजना अति अवश्य जानते हैं और यह भी मान लेते हैं कि बुद्धि की निर्बलता के कारण और मन के पक्ष के हेतु यह काम बहुधा कठिन है। इसलिये मेरी समझ में हमको चाहिये कि आरम्भ में परमेश्वर की प्रार्थना करें जिस्तें वुह हमारे मन को सत्य के खोज में तत्पर करके सत्य की ओर हमारी अगुवाई करे ॥

प्रार्थना ॥

हे तू जो अकेला अनादि और अनन्त ईश्वर और सम्पूर्ण ज्ञान का मूल है दया के नेत्र से हम अज्ञानी सत्य खोजकों पर दृष्टि कर। हे स्वामी। सत्य के खोजने में हमारी सहायता कर क्योंकि तेरी अगुवाई के बिना हम सत्य को पा नहीं सक्ते हैं ॥

अब आप हमको बतलाइये कि वेद के प्रमाणिक होने पर जो शङ्का बौद्धमतावलम्बी आदि करते हैं आप किन प्रमाणों से इन शङ्काओं को दूर करते हैं। अर्थात् वेद किस रीति से प्रमाणिक और ईश्वरोक्त शास्त्र ठहरते हैं ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

वेद सनातन से अनादि गिने गये हैं और आज लों प्रचलित हैं। इसके कर्त्ता किसी मनुष्य का स्मरण संसार में नहीं रहा है। इस कारण लौकिक उत्पत्ति न होने से अनुमान करके पण्डित लोग उसको अनादि और ब्रह्मा का उच्चारा हुआ मानने में सम्मति रखते हैं। और वेदों के किसी २ अंश में लौकिक वृत्तान्त होने से उसके अनादि होने में दोष नहीं लगता है अथवा काठक आदि में मनुष्यों के नाम होने से सन्देह नहीं होता है। क्योंकि वेद का जो २ अंश पूर्व काल में किसी प्रसिद्ध मुनि से अभ्यास किया गया सो ही अंश इसके उपरान्त उसी मुनि के नाम से कहलाता था। इसके अनुसार पूर्व मीमांसा का सूत्रकर्त्ता जैमिनि वेद का अनादि होना इन्हीं प्रमाणों से स्थापन करता है ॥ जैसा ॥

वेदांश्चैके सन्निकर्षं पुरुषाख्याः। अनित्यदर्शनाच्च।
उक्तन्तु शब्दपूर्वत्वम्। आख्या प्रवचनात् ॥
परन्तु श्रुति सामान्यम् ॥

अर्थात् कोई २ यह शङ्का करते हैं कि वेद नवीन हैं क्योंकि उनके अंश काठक कौथुम इत्यादि मनुष्यों के नाम से कहलाते हैं। फिर इसलिये कि उन में जन्मेजय आदि अनित्य मनुष्यों की कथा हैं। परन्तु शब्द का अनादि होना तो पहिले ही स्थापन करचुके हैं और वेद के अंश जो काठक आदि नाम से कहते

हैं उसका कारण यह है कि काठक आदि ने उन भागों को पहिले पढ़ा है। और जनमेजयादि पद जो वेद में दिखाई देते हैं सो सचमुच मनुष्यों के नाम नहीं परन्तु और पदार्थ के तात्पर्य्य से कहे गये हैं॥

इसी प्रकार से समस्त और शास्त्रों को भी जब मुनि लोगों ने ब्रह्मा के मुख से पाया था तो क्रम २ से अपने शिष्यों को दिया। यों शास्त्रों का सम्पूर्ण सङ्ग्रह परम्परा से प्राप्त हुआ और सदा से इस बात का स्वीकार करते हैं कि ब्रह्मा के मुख से निकला और दैवीय है। इस दशा में सम्पूर्ण शास्त्रों का ईश्वरोक्त और प्रमाणिक होना शब्द प्रमाण से सिद्ध होता है॥

सत्यार्थी का वचन॥

आप इस बात को स्मरण कीजिये कि आप्तवाक्यं शब्दः। अर्थात् शब्द प्रमाण बिश्वास योग्य का वचन है। और जब लों यह बात सम्पूर्ण रूप से सिद्ध न हो कि बोलनेवाला बिश्वास योग्य है तब लों बुद्धिमान् उसकी साची पर आसरा नहीं करते हैं॥

बर्त्तमान काल में तो शास्त्रों का कोई कर्त्ता जीता नहीं है क्योंकि वे सब के सब बहुत काल से परलोक में चले गये हैं। इस दशा में परम्परा की बात के बिना उनका वृत्तान्त कोई नहीं जान सक्ता है परन्तु जब लों उसकी परीक्षा न करे और जांच न लेवे परम्परा की बात पर आसरा करना बुद्धिमान् को उचित नहीं है। क्योंकि प्रसिद्ध है कि बहुतसी निष्प्रमाण कथा और कल्पित बातें जो परम्परा से होती आई हैं और संसार में प्रचलित हैं बिश्वास के योग्य नहीं। कितने अविवेकी जन तो उन पर बिश्वास लाते हैं परन्तु विवेकी ध्यान करने से उनकी मिथ्यता प्रगट करते हैं। बरन वे कथा भी जिनकी उत्पत्ति किसी सत्य मूल से

देख पड़ती है बहुधा क्रम २ से बदल जाती है। जैसी जल की धारा जो निर्मल सोत से निकलती है पहिले अति निर्मल और स्पष्ट बह जाती है परन्तु बल से बहके थोड़े बिलम्ब के पीछे मट्टी कीचड़ आदि बस्तुओं के मिलाने से मद्‌ली हो जाती है। इसी प्रकार से वृत्तान्त की धारा भी जो कक्ता के स्वच्छ झरने रूप मुख से निर्मल निकलती है तो भी मिथ्या कल्पित बातों के मिलाने से और सत्य बात के बढ़ाव से मलिन और अस्पष्ट हो जाती है। इस कारण हे पण्डितजी बिचार की बात है कि वुह कहावत जो इस देश में फैल रही है अर्थात् कि बेद प्रमाणिक और देव्य और ईश्वर वाणी है सो क्या सत्य है कि असत्य॥

वेदविद्वान् का वचन॥

इस बिषय में मैं उस परम्परा की बात पर जो सनातन से आज लों भारतखण्ड में कही गई है बिश्वास लाता हूं। जो आप का भिन्न बिचार हो तो बतलाइये परन्तु परम्परा की बात को छोड़ अन्य प्रमाणों का जो वर्णन मैं ने किया आप इनका क्या बिचार करते हैं॥

सत्यार्थी का वचन॥

परम्परा की बात को छोड़ आपने दो और बिषयों का वर्णन किया परन्तु मेरी समझ में ये भी उसके समान ध्यान करने से यथार्थ प्रमाण नहीं ठहर सक्ते हैं। जैसे जैमिनि का सूत्र शब्द अनादि है यद्यपि यह बात ग्रहण भी हो तथापि वेद का अनादि होना इस से सिद्ध नहीं हो सक्ता है। क्योंकि जिस प्रकार से वेद का शब्द है उसी प्रकार से समस्त और पुस्तकों का शब्द भी

है। बरन वे पुस्तकें भी जिन में वेद खण्डन होता है इस प्र-
माण से अनादि ठहरतीं। परन्तु शब्द का अनादि होना क्यों-
कर सिद्ध हो सक्ता है इस बात का कोई प्रमाण देख नहीं पड़ता
है बरन शब्द का उत्पन्न होना प्रत्यक्ष है और जो उत्पन्न हुआ
क्योंकर अनादि हो सक्ता है॥

वेदविद्वान् का वचन॥

आपका यह प्रमाण तो अन्नभट्ट नैयायक के वचन के समान
है कि उसने यों कहा है॥

मूल॥

साध्याभावव्याप्योहेतुर्बिरुद्धः यथा शब्दोनित्यः
कृतकत्वादिति कृतकत्वं हि नित्यत्वाभावेना-
नित्यत्वेन व्याप्तम्॥

अनुवाद॥

बिरुद्ध हेतु उसको कहते हैं जिस में साध्य के अभाव की
व्याप्ति रहती है। जैसे शब्द नित्य है क्योंकि कार्य्य है इस न्याय
में कृतकत्व अर्थात् कार्य्यत्व हेतु नित्यत्व के अभाव की व्याप्ति
रखता है इसलिये बिरुद्ध है॥

और मैं मान लेता हूं कि इस प्रमाण का कोई उत्तर नहीं
हो सक्ता है परन्तु जब वेदों के किसी लौकिक कर्त्ता का स्मरण
नहीं रहा है तो ब्रह्मा को छोड़ उसका कर्त्ता कौन हो सक्ता है॥

सत्यार्थी का वचन॥

कर्त्ता का स्मरण न रहने से ग्रन्थ की प्राचीनता तो सम्भव
हो सक्ती है परन्तु उसका अनादित्व सिद्ध नहीं हो सक्ता है। जैसे

यदि किसी घर का जो कर्त्ता था कदाचित् कोई नहीं जानता कि कौन था तथापि कोई इससे अनुमान नहीं करेगा कि वुह घर अनादि है अथवा कि उसका कर्त्ता ब्रह्मा था। आप तो जानते हैं कि काशी से चारेक कोस की दूरी पर एक स्थान सारनाथ है। वहां अनेक ग्रह खम्भ मन्दिर मूर्त्तें आदि देख पड़ते हैं और कोई नहीं जानता कि उनके कर्त्ता कौन थे। उनके स्वरूप से तो निश्चय है कि उनके कर्त्ता बौद्धमतावलम्बी होंगे और एक काल में ये लोग इस देश में प्रबल थे परन्तु कौन २ पुरुष उन मन्दिरों के बनानेवाले थे और उनके क्या २ नाम थे कोई नहीं जानता तथापि आप ऐसा नहीं मानेंगे कि सारनाथ नगर अनादि अथवा उसका कर्त्ता ब्रह्मा था। और ग्रन्थ के बिषय में इसी प्रकार का बिचार करना उचित है॥

वेदविद्वान् का वचन॥

आप कहते हैं कि सारनाथ के ग्रह आदिक के स्वरूप से निश्चय है कि उनके बनानेवाले बौद्धमतावलम्बी थे अर्थात् आप किसी २ लक्षण से उनके कर्त्ता का अनुमान करते हैं। क्या वेदों के बिषय में इसी प्रकार से अनुमान करना उचित नहीं है॥

सत्यार्थी का वचन॥

निस्सन्देह इसी प्रकार से अनुमान करना बहुत ही उचित और यथार्थ है परन्तु ऐसे अनुमान से वेदों का कर्त्ता ईश्वर न ठहरेगा और वेद अनादि न ठहरेंगे। क्योंकि जो २ लक्षण उन में पाये जाते हैं उन से अनुमान सिद्ध है कि वेदों के कर्त्ता मनुष्य थे। जो मनुष्य वेदानुक्रमणी नामक प्राचीन ग्रन्थ में मन्त्रों के ऋषि कहलाते हैं सो ही वेद के प्रथम कर्त्ता थे क्योंकि

यदि वे मन्त्रों के कर्त्ता न थे तो किस लिये भिन्न २ मन्त्र उनके नाम से कहलाते हैं। यदि आप कहें कि ये ऋषि मन्त्रों के दर्शी अर्थात् देखनेवाले थे पर वे आप मन्त्रों के बनानेवाले न थे तो इसका उत्तर यह है कि वशिष्ठ और बिश्वामित्र आदिक जो मन्त्रों के ऋषि कहलाते हैं सो मन्त्रों के कई एक स्थलों में अपना ही वृत्तान्त कहते हैं। जब वे अपनी बार्त्ता मन्त्रों में वर्णन करते हैं तो बहुत स्पष्ट है कि मन्त्र उन्हीं के बनाये हुए हैं॥

फिर बहुतसे राजाओं और जातिगणों जैसे दस्यु तृत्सु इत्यादि और बहुत वृत्तान्तों जैसे युद्ध विजय इत्यादि और अनेक स्थानों देशों और नदियों की जो अनादि नहीं हैं चर्चा वेद में है तो वेद जिस में उन पुरुषों और स्थानों और वृत्तान्तों की चर्चा है किस प्रकार से अनादि हो सकेगा। इस बात पर जो मीमांसक लोग उत्तर देते हैं कि वेद में जो अनेक देशों और पुरुष आदिकों के नाम देख पड़ते हैं सो सचमुच उनके नाम नहीं हैं परन्तु और २ बस्तुओं से उनका तात्पर्य्य है सो बात ऐसी निष्प्रमाण और निर्युक्तिक है कि कोई विवेकी उसका स्वीकार न करेगा। और स्पष्ट जान पड़ता है कि पण्डित लोगों ने अपनी बात का प्रतिपालन करने के लिये ऐसी कल्पना किई है॥

वेदविद्वान् का वचन॥

आपके प्रमाणों से यदि सिद्ध भी ठहरे तथापि निरकेवल यह परिणाम निकलता कि वेद अनादि नहीं हैं और वेदान्ती और नैयायक दोनों यह बात मानते हैं। वे कहते हैं कि हर एक सृष्टि के समय ईश्वर वेद को बनाता है और इस बात का यह प्रमाण बतलाते हैं कि ईश्वर की सामर्थ और अनन्त बुद्धि के बिना ऐसा बड़ा कार्य्य नहीं हो सक्ता है। इस सिद्धान्त

का तात्पर्य्य नहीं है कि वेदों के प्रथम कर्त्ता मनुष्य न थे परन्तु यह कि जो ऋषि इत्यादि उनके पहिले वक्ता थे सो निरी अपनी स्वाभाविक बुद्धि और ज्ञान मात्र से नहीं परन्तु ईश्वरावेश और दैवज्ञान की सामर्थ से कहते थे। और जब मैं वेदों के ज्ञान पर ध्यान करता हूं तो उनका मनुष्य की बुद्धि से बन जाना निस्सन्देह मुझको निपट असम्भव देख पड़ता है ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

इस बिषय में आपका कहना बहुत ही ध्यान योग्य है और इसके सत्य बिचार के लिये अवश्य है कि अपने मन को सीधा और निरपक्ष रक्खें। विद्यावान् ऐसा मानते हैं कि जब लों किसी वृत्तान्त के समझने के लिये सृष्टि से बाहर किसी और कर्त्ता का अनुमान अवश्य न हो तब लों ऐसे कर्त्ता का अनुमान करना उचित नहीं है। अब देखा चाहिये कि वेदों में कोई ऐसा वृत्तान्त मिलता है जिसकी रचना मनुष्य की स्वाभाविक सामर्थ से बाहर थी। आपकी इच्छा हो तो वेदों और २ शास्त्रों का वृत्तान्त जिस को आप भली भांति जानते हैं आरम्भ से कहके इसके दो एक बिषयों का स्मरण आपको दिलावेंगे जिस्से इस भारी प्रकरण में मेरा सम्पूर्ण मत आपको विदित होवे ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

वेदों और अन्य शास्त्रों को ईश्वर वाणी जानके उनके वृत्तान्त के सुनने से सदा आनन्दित हूं और आप जो ऐसी सूक्ष्म बातों के विवेकी और सत्य बिचारी हैं सन्देह नहीं है कि आपकी बुद्धि और ज्ञान से उन शास्त्रों का यथार्थ अभिप्राय और स्पष्ट रूप से भी मुझ पर प्रकट होजायगा ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

इस वृत्तान्त को भली भांति समझने के लिये पहिले जानना चाहिये कि ब्राह्मण आदि वर्ण जो इस भारतखण्ड में रहते हैं सो पूर्व काल में आर्य्या नाम से कहलाते थे और वेद के अनेक स्थलों में उनका यही नाम आता है। अब आर्य्या नाम उस कुल का नाम है जिस्से आदि में ब्राह्मण आदि वर्ण उत्पन्न हुए। इसी मूल से कितने एक और वंश भी निकले और जिस रीति भारतखण्ड में उसी रीति और २ देशों में उनके नाम बदल गये। उन वंशों में प्राचीन फारसी और यवन थे। इन तीन वंशों का एक ही मूल से उत्पन्न होना अनेक प्रमाणों से सिद्ध होता है। एक तो यह है कि उनकी पुरानी भाषाओं के शब्द धातु और विभक्ति एक ही हैं। पण्डितजी इन दिनों में बहुतेरे विद्यावान् जो भिन्न २ भाषाओं में निपुण हैं इस प्रकरण का मन लगाके अति खोज करते हैं यदि आप इसका सम्पूर्ण वृत्तान्त जानने चाहते हैं तो किसी एक पुस्तक को देखिये जिस में इसकी चर्चा है। परन्तु उस खोज से यह परिणाम सिद्ध है कि बिशेष करके प्राचीन यवनी भाषा की क्रिया और सञ्ज्ञा और इन दोनों की विभक्ति और अनेक प्रत्यय इत्यादि सो संस्कृत भाषा के इन्हीं शब्दों से ठीक मिलते हैं। फिर धर्म्म की कितनी एक रीतों की समानता भी है जैसे भारतखण्ड में अग्नि की पूजा इत्यादि पूर्व काल से प्रचलित हो रही है तैसे प्राचीन फारस आदि देशों में उनकी चाल पहिले थी। इस आर्य्या कुल का मूल स्थान फारस देश की कहीं उत्तर ओर को और भारतखण्ड के पश्चिम उत्तर कोने में था। इस के पीछे उनके कितने एक झुंड स्वदेश त्यागी हो भारतखण्ड

में आ बसे । उस वृत्तान्त के काल का ठीक समाचार नहीं मिलता है परन्तु अनुमान है कि उस्से आज लों पांच सहस्र बरसों से कुछ न्यून बीत गये होंगे ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

इस बिषय में आपका कहना मुझको अति असम्भव देख पड़ता है। क्योंकि इतने बरस तो कलियुग ही के बीत गये हैं। और इस्से पहिले तीन युग अर्थात् चालीस लाख बरस हो रहे थे तो आप किस प्रकार से कह सक्ते हैं कि पांच सहस्र बरस भी न रहे ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

युगों की जो गिनती शास्त्रों में मिलती है सो किसी प्रकार से सिद्ध नहीं हो सक्ती है क्योंकि विद्या के द्वारा एक बात सिद्ध है जिसको सुनने से कदाचित् आप अचम्भित होंगे। फिर भी यह बात परीक्षा युक्त विद्या से निश्चय है सो यह है कि अब से छः सात सहस्र बरस के पहिले इस भूमण्डल की ऐसी गति थी जिस में मनुष्य जाति का जीता रहना अनहोना था। और सचमुच छः सहस्र बरस से पहिले मनुष्य जाति की उत्पत्ति नहीं हुई उस विद्या से जाना जाता है कि जो बनस्पति जीव जन्तु उस काल से पहिले भूमण्डल में थे और जिनकी हड्डियां आदि चिन्ह भूमि के पृष्ठ में मिलते हैं ऐसे थे जो अब सम्पूर्ण संसार में कहीं नहीं मिलते हैं। और जो अब मिलते हैं सो उस काल के अवशिष्ट में उनका चिन्ह कहीं नहीं देख पड़ता है। बरन प्रत्यक्ष लक्षणों से यह भी सिद्ध है कि उस काल का जल बतास उस प्रकार का था जिस में मनुष्य जाति आदि जीव जन्तु

जो अब हैं किसी रीति से जीते नहीं रह सक्ते। इस समाचार का सन्देह आपके मन में होवे तो होवे परन्तु पश्चिम देश वालों की विद्या अति प्रमाणिक और पक्की हैं। और निश्चय है कि यह समाचार यथार्थ और सच्चा है ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

आपका वृत्तान्त तो निस्सन्देह अति आश्चर्य्य है परन्तु बिन जाने मैं इसको किस प्रकार से तरक कर सक्ता हूं। कदाचित् सच्चा होवे। आप तो बड़े सत्यविचारी हैं और जान बूझके एक निष्प्रमाण बात को निश्चय सत्य नहीं कहेंगे। परन्तु इस बात को छोड़ आर्य्यो कुल का जो वृत्तान्त आप करते थे सो आगे बढ़ के कहिये ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

ये आर्य्यो लोग भारतखण्ड के प्रथम निवासी न थे उन से पहिले एक दूसरा वंश इस देश में रहता था। वेदों के कितने स्थलों में इस दूसरे वंश का नाम दस्यु लिखा है और उस काल में आर्य्य और दस्यु कुलों के बीच सङ्ग्राम हो रहा था। जैसे ऋग्वेद के ५१ सूक्त के ८ वें पद में लिखा है ॥

विजानीह्यार्य्यान्ये च दस्यवोबर्हिष्मतेरन्धयाशासदव्रतान्शाक्री
भव यजमानस्य चोदिता विश्वेत्ता ते सधमादेषु चाकन ॥ ८ ॥

अर्थात् आर्य्य और दस्युओं को भी जान रख। और उन्हें जो यज्ञ करनेहारों के कर्म के बिरोधी हैं रोकके उनके बस में कर और हे सामर्थी। तू यज्ञ करनेहारों को उभाड़ ऐसे यज्ञों में जिन से तू आनन्दित होता है मैं तेरे सब चरित्रों की प्रशंसा करने चाहता हूं ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

अब मेरे चित्त में आता है कि उसी वेद के एक दूसरे सूक्त में उसी प्रकार का वृत्तान्त लिखा है। जैसे १०३ सूक्त की ३ ऋचा ॥

स जातूभर्मा श्रद्दधान ओजः पुरोविभिन्दन्नचरद्विदासीः ॥

विद्वान् वज्रिन्दस्यवे हेतिमस्यार्य्यं सहोवर्धया द्युम्नमिन्द्र ॥३॥

अर्थात् वुह वज्र धारण करनेहारा और उन कार्य्यों को जो पराक्रम से किये जाते हैं बड़े आदर से चाहनेहारा दस्युओं के नगरों को नाश करता हुआ चला गया। हे वज्र धारण करनेहारे और स्तुतियों के जाननेहारे इन्द्र। तू इस स्तुति करनेहारे के नाशक पर शस्त्र चला और आर्य्यों के बल और यश को बढ़ा ॥

आर्य्यो और दस्यु कुलों का जो वर्णन आप करते हैं सो इन सूक्तों के तात्पर्य्य से ठीक मिलता है। पहिले तो इनका अर्थ मैं भली भांति नहीं जानता था परन्तु अब वुह बहुत स्पष्ट देख पड़ता है। आप इस विषय का और वर्णन करिये ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

यह दस्यु कुल क्रम २ से बुद्धिमान आर्य्यो लोगों के हाथ हार मान अपने २ देश को छोड़ पर्वतों आदि स्थानों में सरण लेने को गये उनके अवशिष्ठ भील गोंड इत्यादि नाम से आज लों विन्ध्य आदि पर्वतों में मिलते हैं और कितने दस्यु पूर्व काल में आर्य्यो के आधीन हो उनके बीच बास कर साधारण वर्णों के सङ्ग मिल गये। जिस समय आर्य्यो कुल पहिले भारतखण्ड में

आया उस समय एक देश में जो पंजाब के निकट है बास करता था। यह बात भी वेद के कितने सूक्तों से जानी जाती है क्योंकि उन सूक्तों में उस देश की पांच नदियों और सिन्धु और यमुना नदियों के नाम बारम्बार आते हैं परन्तु एक पण्डित ने ऋक् साम यजुर वेदों का अभ्यास करके यह बात निर्णय की है कि उन तीनों वेदों में गङ्गा नदी का नाम केवल एक ही बार आता है॥

जैसे ऋक् वेद के १० मण्डल ६ अनुवाक के ७ सूक्त में यह ऋचा है॥

इमं मे गङ्गे यमुने सरस्वती इत्यादि॥

अर्थात् हे गङ्गा यमुना और सरस्वती इत्यादि॥

इस बात से यह परिणाम निकलता है कि उस काल में आर्य्या लोग गङ्गा के तीर पर नहीं परन्तु उसके दूर पश्चिम दिशा को बास करते थे। इसके उपरान्त जब मनु की स्मृति बन गई तब आर्य्या कुल का देश बढ़ गया था॥

जैसे मनु संहिता के दूसरे अध्याय में॥

सरस्वतीदृषद्वत्योर्देवनद्योर्यदन्तरम्।
तं देवनिर्मितं देशं ब्रह्मावर्त्तं प्रचक्ष्यते॥ १७॥
तस्मिन् देशे य आचारः पारम्पर्य्यक्रमागतः।
वर्णानां सान्तरालानां स सदाचार उच्यते॥ १८॥
कुरुक्षेत्रं च मत्स्याश्च पञ्चालाः शूरसेनकाः।
एष ब्रह्मर्षिदेशोवै ब्रह्मावर्त्तादनन्तरः॥ १९॥
हिमवद्विन्ध्ययोर्मध्यं यत्प्राग्विनशनादपि।
प्रत्यगेव प्रयागाच्च मध्यदेशः प्रकीर्त्तितः॥ २१॥
आसमुद्रात्तु वै पूर्वादासमुद्रात्तु पश्चिमात्।
तयोरेवान्तरं गिर्य्योरार्य्यावर्त्तं विदुर्बुधाः॥ २२॥

अर्थात् सरस्वती और दृषद्वती जो देवताओं की नदियां हैं उनके मध्य में जो देश है सो देवों का बनाया है उसको ब्रह्मावर्त्त कहते हैं ॥ १७॥ उस देश में परम्परा से वर्णों का जो आचार चला आया है वह सदाचार कहावता है ॥ १८॥ कुरुक्षेत्र मत्स्य पञ्चाल और शूरसेन यह ब्रह्मर्षियों का देश है जो ब्रह्मावर्त्त से लगा है ॥ १९ ॥ हिमवान् और बिन्ध्याचल के मध्य में बिनशन के पूर्व और प्रयाग के पश्चिम जो देश है सो मध्यदेश कहावता है ॥ २१ ॥ और उन्हीं पर्वतों के मध्य में पूर्व समुद्र से लेके पश्चिम समुद्र लों जितना देश है उसको पण्डित लोग आर्य्यावर्त्त कहते हैं ॥ २२ ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

मनु के इन वचनों से ज्ञान होता है कि उस काल में बिशेष वर्ण का नियम प्रबल था। क्या इस्से आपका वर्णन कि सब के सब एक ही मूल से उत्पन्न हुए खण्डन नहीं होता है ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

मनु के काल में तो ब्राह्मण आदि वर्ण का भेद था परन्तु ऐसा ज्ञान पड़ता है कि जब आर्य्या कुल पहिले भारतखण्ड में आया उस काल बिशेष वर्ण नहीं था। कितने बिदेशी पण्डित जिन्हों ने वेदों का अभ्यास किया है कहते हैं कि वेद के प्राचीन सूक्तों में बिशेष वर्ण का वृत्तान्त नहीं है परन्तु कितने और जानते हैं कि अधिक खोज किये बिना इस बिषय की सत्यता निर्णय नहीं हो सक्ती है ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

क्या आपको इस बात का ज्ञान नहीं है कि पुरुष सूक्त में चार वर्ण के स्थापन होने का वृत्तान्त सम्पूर्ण रूप से लिखा है।

इस दशा में कोई नहीं कह सक्ता है कि वेदों में बिशेष वर्णों का समाचार नहीं है ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

सच पुरुष सूक्त में ऐसा वृत्तान्त लिखा है परन्तु कितने एक लक्षणों से पण्डित लोग जानते हैं कि वह सूक्त प्राचीन नहीं है नवीन है क्योंकि उसका अभिप्राय समस्त और मन्त्रों और सूक्तों से भेद है इन में भिन्न २ इष्ट देवताओं का यश और स्तुति हैं परन्तु पुरुष सूक्त में निरकेवल परमात्मा की स्तुति है इस कारण विवेकी लोग बिचार करते हैं कि यह उन से नवीन है। फिर पुरुष सूक्त की रचना भी दूसरे सूक्तों से भेद है और यह भेद उस प्रकार का है जिस्से उसकी नवीनता सिद्ध होती है जैसा पुराणों का संस्कृत वेदों के संस्कृत से नवीन देख पड़ता है। इस कारण उस सूक्त से सिद्ध नहीं हो सक्ता कि आदि काल में चार वर्ण का भेद था। और बुद्धि आदि प्रत्यक्ष प्रमाणों से सिद्ध है कि प्रकृति मूल स्वभाव के बिषय में चार वर्णों का कुछ भेद नहीं है। फिर शास्त्रों में भी इस बात का चिह्न देख पड़ता है कि कितने मनुष्य जो जन्म के ब्राह्मण नहीं थे फिर भी ब्राह्मण हो गये। परन्तु आप जो शास्त्रों को ऐसी भली भांति जानते हैं बतलाइये कि गार्ग्य आदि क्षत्रियों का शास्त्रों में कैसा वृत्तान्त लिखा है ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

विष्णु पुराण के ४ अंश १९ अध्याय में लिखा है। गद्य। गर्गाच्छिनिस्ततोगार्ग्याः शैन्याः क्षत्रोपेता द्विजातयो बभूवुः ९ अर्थात् गर्ग से शिनि उससे शैन्य नाम गार्ग्य हुए जो क्षत्रिय धर्म्म युक्त ब्राह्मण हुए ॥ फिर यह भी लिखा है ॥

महावीर्यादुरक्षयो नाम पुत्रोऽभूत् तस्य त्रय्यारुणपुष्करिणौ कपिश्च पुत्रत्रयमभूत् तच्च त्रितयमपि पश्चाद्विप्रतामुपजगाम इति ॥

अर्थात् महावीर्य से उरक्षयनाम पुत्र हुआ उसको त्रय्यारुण पुष्करी कपि ये तीनों पुत्र हुए वे तीनों पीछे से ब्राह्मण हुए॥

सत्यार्थी का बचन ॥

अब आप ध्यान कीजिये कि जब ये लोग क्षत्री होके ब्राह्मण हो गये तो बिशेष वर्ण किस प्रकार से स्वाभाविक हो सक्ता है। फिर एक बात यह है कि पुराणों के कितने स्थलों में लिखा है कि प्राचीन राजाओं ने चार वर्णों को स्थापन किया। जैसें विष्णु पुराण के ४ अंश के ८ अध्याय में लिखा है ॥

घृत्समदस्य शौनकश्चातुर्वर्ण्यप्रवर्त्तयिताऽभूत् ॥

अर्थात् घृत्समद का बेटा शौनक चारों वर्णों का प्रचारने हारा हुआ। फिर उसी अध्याय में यह लिखा है ॥

भार्गस्य भार्गभूमिरतश्चातुर्वर्ण्यप्रवृत्ति: ॥

अर्थात् भार्ग से भार्गभूमि उस से चारों वर्णों का प्रचार हुआ ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

इसके समान मत्स्य पुराण में भी लिखा है ॥

चतुरो नियतान् वर्णान् त्वं स्थापयेति वरोब्रह्मणा बलये दत्त: ॥

अर्थात् ब्रह्मा ने बलि को वर दिया कि तू चारों वर्णों को व्यवस्था से स्थापन करेगा ॥

फिर वायु पुराण में भी है ॥

पुत्रोघृत्समदस्य च शुनकोयस्य शौनक: ।
ब्राह्मणा: क्षत्रियाश्चैव वैश्या: शूद्रास्तथैव च ।
एतद्वंशे समुद्भूता विचित्रै: कर्मभिर्द्विजा: इति ॥

अर्थात् घृत्समद का बेटा शुनक हुआ जिसके शौनक नाम पुत्र के वंश में अनेक प्रकार भिन्न २ कर्म से ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य और शूद्र उत्पन्न हुए ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

अब आपकी कृपा से चार वर्णों की अनेक भिन्न २ उत्पत्ति शास्त्र की शिक्षा के अनुसार हो चुकी है। इस समय इन बिरुद्ध वृत्तान्तों की चर्चा कि कौन यथार्थ है और कौन अयथार्थ है अथवा इन शास्त्रों के प्रमाणों की चर्चा हम नहीं करते हैं। परन्तु एक बात सिद्ध है कि जब राजाओं ने अपनी आज्ञा से चार वर्ण स्थापन किये तो मनुष्य जाति में बिशेष वर्णों का कोई स्वाभाविक गुण नहीं हो सक्ता। अब इसके सम्बन्ध में एक और बात का बिचार कीजिये कि पूर्व काल में ब्राह्मणों और क्षत्रियों के बीच अपनी २ प्रधानता के लिये बड़ा विवाद और झगड़ा हो रहा था। बिश्वामित्र आदि प्रसिद्ध क्षत्री चाहते थे कि हम भी वेद पढ़ाने का अधिकार रक्खें और बिश्वामित्र और वशिष्ठ के बीच जो द्वेष पुरोहिताई के बिषय में हो रहा था इसके प्रत्यक्ष लक्षण ऋक्वेद में मिलते हैं। इन ऋषियों के सूक्तों से जाना जाता है कि वे दोनों सुदास नामी एक राजा के पुरोहित थे। इन सूक्तों में आप देख लीजिये कि एक २ ऋषि देवताओं के प्रसन्न करने में अपनी २ सामर्थ्य का बखान करता है। इस प्रकार से वशिष्ठ कहता है ॥

ऋक्वेद के ७ मण्डल २ अनुवाक् १९ सूक्त में।

दूरादिन्द्रमनयन्ना सुतेन तिरोवैशन्तमतिपान्तमुग्रम् ॥
पाशद्युम्नस्य वायतस्य सोमात् सुताद् इन्द्रो वृणीता वशिष्ठान् इत्यादिना ॥

अर्थात् वे सोम के अर्पण से इन्द्र को जो सामर्थी और चमस अर्थात् सोम पात्र को लिये पी रहा था दूर से ले आये इन्द्र ने वयत के पुत्र पाशद्युम्न के सिद्ध किये हुए सोम रस से वशिष्ठ के पुत्रों को उत्तम जाना ॥ फिर उसी सूक्त में लिखा है ॥

वशिष्ठस्य स्तुवत इन्द्रो अशृद् उरु तृत्सुभ्यो अकृणोद् उ लोकं ॥

अर्थात् जब वशिष्ठ स्तुति कर रहा था तो इन्द्र ने सुना और तृत्सुओं को एक बिस्तृत स्थल दिया ॥

इन सूक्तों में वशिष्ठ सुदास को जनाता है कि मेरी ही सामर्थ और भजन से इन्द्र का आशीर्वाद प्राप्त होता है। अब दूसरे सूक्तों में बिश्वामित्र ऋषी इसी प्रकार से अपना बखान करता है। क्या आपको बिश्वामित्र का कोई सूक्त स्मरण आता है ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

हां ३ मण्डल के ४ अनुवाक के १५ सूक्त में बिश्वामित्र यों कहता है॥

महाँ ऋषिर्देवजा देवजूतोऽस्तभ्नात् सिन्धुमर्णवं नृचक्षाः
बिश्वामित्रोयदवहत् सुदासमप्रियायत कुशिकेभिरिन्द्रः॥

अर्थात् बड़े सामर्थी और तेजों के निधि और तेजों से दृढ़ीकृत और मनुष्यों के अध्यक्ष ऋषि ने जल से पूर्ण नदी को रोका और बिश्वामित्र ने सुदास राजा से जब याग करवाया तब इन्द्र कुशिक के पुत्रों के द्वारा से प्रसन्न किया गया ॥ फिर उसी सूक्त में भी लिखा हैं ॥

य इमे रोदसी उभे अहमिन्द्र मतुष्टवं बिश्वामित्रस्य रक्षति ब्रह्मेदं भारतं जनमिति ॥

अर्थात् मुझ बिश्वामित्र के मन्त्र से जिसने स्वर्ग और पृथ्वी दोनों में रहनेहारे इन्द्र की स्तुति किई। भरत कुल के लोगों की रक्षा होती है ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

आपने ठीक कहा है और उसी सूक्त के अन्त की ऋचा देखिये जिस में मन्त्रकर्त्ता बिश्वामित्र वशिष्ठ को बहुतसी बुरी बातें कहता है। वेद की अनुक्रमणिका के कर्त्ता ने इस प्रकार को इस ऋचा की टीका किई है ॥

अन्त्या अभिशापार्थास्ता वशिष्ठद्वेषिण्योन

वशिष्ठाः शृण्वन्तीति ॥

अर्थात् ये अन्त की ऋचाएं शाप के लिये हैं और वशिष्ठ के बिरुद्ध हैं। इसलिये वशिष्ठ के सन्तान उन्हें नहीं सुनते हैं ॥

फिर बृहत् देवता नाम ग्रन्थ में इन्हीं ऋचाओं के बिषय में शौनक ने यों कहा है ॥

शतधा भिद्यते मूर्द्धा कीर्त्तनेन श्रुतेन वा
तेषां बाला: प्रमीयंते तस्मात् तास्ता न कीर्त्तयेदिति ॥

अर्थात् इनके कहने अथवा सुनने से मस्तक के सैंकड़ों टुकड़े होते हैं और ऐसों के लड़के मरजाते इसलिये कोई उनको न सुनावे ॥

इन वचनों से सिद्ध होता है कि धर्म्म के प्रकरण में भी ब्राह्मणों को चत्रियों से बिवाद करना पड़ा। और इससे अनुमान होता है कि आदि काल में वे इस प्रधानता के अधिकारी न थे परन्तु क्रम २ से इसको प्राप्त करते गये। और शास्त्रों से जाना जाता है कि पूर्व काल में वेण आदि राजा उनकी प्रधानता निपट असह्य जानते थे। आप जो सत्य बिचारी हैं एक उदाहरण जो ऐतरेय ब्राह्मण के ७ अध्याय में लिखा है सुनिये ॥

विश्वान्तरोह सौषद्मन : श्यापर्णान् परिचक्षाणोविश्यापर्णं यज्ञमाजह्रे । तद्धानुबुध्य श्यापर्णास्तं यज्ञमाजग्मुस्तेह तदन्तर्वेद्यासाञ्चक्रिरे । तान् ह दृष्ट्वोवाच पापस्य वा इमे कर्मण : कर्त्तार आसते पूताया वाचोवदितारोयच्छ्यापर्णा इमानुत्थापतेमे मेऽन्तर्वेदिमासिषतेति तथेति तानुत्थापयाञ्चक्रुस्ते होत्थाप्यमाना रुरुविरे ये तेभ्योभूतवरेभ्यो ऽसितमृगा : कश्यपानां सोमपीथमभिजिग्युः पारिक्षितस्य जनमेजयस्य विकश्यपे यज्ञे तैस्ते । तत्र वीरवन्त आसु : कस्वित् सोऽस्माकास्ति वीरोय इमं सोमपीथमभिजेष्यतीति ॥ अथ महमस्मिवोवीर इति होवाच रामोभार्गवेयो रामोहास भार्गवेयो ऽनूचान श्यापर्णीयस्तेषां होत्तिष्ठतामुवाचापि नु राजन्नित्थं विदं वेदेरुत्थापयन्तीति इत्यादिना ॥

अर्थात् सषद्मा के पुत्र विश्वान्तर ने श्यापर्णों का अङ्गीकार न करके बिना उनके यज्ञ किया । इस बात को जान कर श्यापर्ण उस यज्ञ में आये और वेदी के भीतर बैठे । यह देखके वुह बोला कि ये श्यापर्ण बुरे कर्म के करनेहारे और अपवित्र वचन के बोलनेहारे मेरी वेदी के भीतर बैठे हैं इनको उठा दो । इस बात के अनुसार उनको उठा दिया । वे जब उठाये जाते थे चिल्लाके बोले कि एक समय जब परीक्षित का पुत्र जनमेजय कश्यप के पुत्रों को छोड़के यज्ञ करता था तब भूतवीरों के साथ असित मृगों ने कश्यप के पुत्रों को बलात्कार से सोमरस दिलाया सो ये उनके लिये वीर थे । क्या हमारे लिये भी कोई वीर है जो बलात्कार से सोमरस दिलावे । तब भृगु के सन्तान राम ने कहा कि मैं तुम्हारे लिये वीर हूं । भृगु का सन्तान राम श्यापर्णों के कुल में विद्यावान् था सो जब उनको उठाने लगे उसने कहा कि हे राजा । क्या ऐसे विद्यावान् को वेदी से उठा देते हैं ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

आपके वृत्तान्त तो सब ठीक हैं और उन सूक्तों को छोड़ शास्त्र में इस बात के अनेक और प्रमाण भी मिल सक्ते हैं बरन यह भी सिद्ध हो सक्ता है कि प्राचीन ब्राह्मण वेद के अधिकार से सन्तुष्ट न हो राजा होने की इच्छा भी करते थे। परशुराम के चरित्र से जिसने चत्रियों का नाश कर ब्राह्मणों को पृथ्वी दान किया यह बात प्रत्यक्ष है क्योंकि महाभारत में पृथ्वी कश्यप से यों कहती है ॥

एतेषां पितरश्चैव तथैव च पितामहाः।
मदर्थे निहता युद्धे रामेणाक्लिष्टकर्मणा इति ॥

अर्थात् राम ने जो बिना परिश्रम कार्य्य कर सक्ता है मेरे लिये इनके बाप दादे लड़ाई में मार डाले ॥

परन्तु इस प्रकार के प्रमाणों से आपका क्या अभिप्राय है। क्योंकि इन्हीं शास्त्रों में सहस्र बेर लिखा है कि भारतखण्ड में मनुष्यों के बिशेष वर्ण एक स्वाभाविक बस्तु और प्रकृत सिद्ध गुण है। इस दशा में ऐसे वृत्तान्त से जो आप कहते हैं क्या परिणाम हो सक्ता है ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

इस बिषय में आपने मेरे ही लिये ठीक वचन कहा है क्योंकि मैं इसी बात के कहने पर था। उस वृत्तान्त पर जो मैं ने शास्त्रों से निकाला ध्यान करने से शास्त्र के उस सिद्धान्त पर जो आप ने कहा अर्थात् कि बिशेष वर्ण स्वाभाविक बस्तु हैं बड़ा सन्देह मन में आता है। अपना अर्थ अधिक स्पष्ट करने के लिये मैं एक दृष्टान्त कहूंगा आप सुनिये। वुह साची जो वादी के आधीन और उसके पक्ष पर है सो वादी के वचन के बिरुद्ध जान बूझके

अपनी प्रसन्नता से कोई बात नहीं कहता है इसलिये जो कुछ ऐसा साक्षी परीक्षा के समय वादी के बिरुद्ध ग्रहण करता है सो अवश्य बिश्वास योग्य होगा। अब प्रत्यक्ष है कि जो धर्म्म नियम और रीतें भारतखण्ड में प्रचलित हैं पुराण के कर्त्ता उन नियमों के पक्ष पर थे इस कारण जो कुछ उन नियमों के बिरुद्ध पुराणों में मिलता है सो निस्सन्देह बिश्वास योग्य होगा परन्तु जो कुछ उनके पक्ष पर हो सो परीक्षा के योग्य होगा। इस दशा में मेरे पहिले सिद्धान्त प्रमाणिक ठहरते हैं ॥

अर्थात्

१ बिशेष वर्ण का भेद एक स्वाभाविक बस्तु नहीं है ॥
२ आर्य्याकुल के आरम्भ में बिशेष वर्ण का कुछ भेद नहीं था ॥
३ यह भेद पुरोहितों के उद्योग से क्रम २ से स्थापन हुआ ॥

अब आप जानते हैं कि मनुष्य के समस्त कुलों में यह व्यवहार है कि जो लोग दैव्य भजन और विद्या के प्रधान ठहरते हैं सो बड़ी सामर्थ और प्रतिष्ठा के अधिकारी हो जाते हैं। इस कारण साधारण लोग ब्राह्मणों को जो पुरोहित थे और वर्णों से श्रेष्ठ जानने लगे अन्त में ब्राह्मणों ने अपने को शास्त्रों के रक्षक और अधिकारी ठहराके उनके द्वारा अपनी इच्छा के समान अपनी महिमा और पराक्रम बढ़ा दिया। अब आप ध्यान कीजिये कि इस दशा में वेद अन्य शास्त्रों की लौकिक उत्पत्ति क्या कुछ असम्भव देख पड़ती है ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

आपने तो एक नये प्रकार का प्रमाण रोपा और एकाएकी इसका उत्तर देना सुगम नहीं है क्योंकि जो कुछ आपने कहा सो परिणाम की रीति शास्त्र ही के वचन से मिलता। फिर

भी मैं इस बात को भली भांति समझ नहीं सक्ता हूं कि सम्पूर्ण हिन्दू शास्त्रों की एक लौकिक उत्पत्ति क्योंकर हो क्या किसी मनुष्य की इतनी सामर्थ और बुद्धि और ज्ञान है कि परमेश्वर की सहायता बिना ऐसे शास्त्रों को कल्पे ॥

सत्यार्थी का बचन ॥

वे शास्त्र जो वर्त्तमान काल भारतखण्ड में प्रचलित हैं सो एकाएकी नहीं परन्तु क्रम २ से उत्पन्न हुए । वेदों की संहिता जिन में भिन्न २ देवताओं की स्तुति हैं निस्सन्देह समस्त और शास्त्रों से प्राचीन हैं । यह बात अनेक प्रमाणों से बिशेष करके भाषा के स्वरूप से जानी जाती है । जो कोई वेदों की भाषा की और नवीन संस्कृत की तुल्यता करे सो अवश्य उन दोनों का एक बड़ा भेद देखेगा । विभक्ति इत्यादि का यह भेद जो देख पड़ता है सो भाषा के क्रम २ से अन्तर होने के कारण उत्पन्न हुआ । जिस काल ये प्राचीन सूक्त रचे गये उस काल आर्य्यो लोगों की भाषा कुछ गवांरी थी अर्थात् अच्छी रीति से सुधारी नहीं गई थी । निरन्तर के साधन होने से मंजते २ निदान पाणि-नीय आदि वैयाकरणों ने उसको शुद्ध संस्कृत बनाया । इसके उपरान्त क्रम २ से एक साधारण देश भाषा अर्थात् प्रकृति की बोलचाल हो गई और तब साधारण लोगों ने संस्कृत बोलना छोड़ दिया । इस प्रकार से संस्कृत निरे पण्डितों की भाषा ठहरी और ग्रन्थों में उसकी चर्चा और रचा हुई और इस कारण आगे को पलट नहीं गई उस काल से आज लों जैसी की तैसी रही ॥

वेदविद्वान का वचन ॥

मैं जानता था कि वेदों और पुराणों की संस्कृत में बड़ा भेद है यहां लों कि वेदों के कितने शब्दों के अर्थ लुप्त हो गये । परन्तु इसका कारण मैं भली भांति नहीं समझता था । जो

वर्णन आप करते हैं सो क्या और भाषाओं के विषय में भी ठीक आता है ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

हां अन्य देशी भाषाओं का भी यही व्यवहार है। प्राचीन यवनों के सब से पुरातन ग्रन्थों में एक ऐसी भाषा मिलती है जो उनके नवीन ग्रन्थों की भाषा से उसी प्रकार भिन्न है जिस प्रकार वेदों की संस्कृत पुराणों की संस्कृत से अन्तर है। और समस्त देशों में भी यह व्यवहार है जो २ भाषा बोल चाल में हैं सो क्रम २ से दूसी प्रकार पर बदल जाती हैं ॥

परन्तु अब आप एक और बात का ध्यान कीजिये कि यह अन्तर निरी भाषा का नहीं है परन्तु मत का भी देख पड़ता है। वेद के सूक्तों में अग्नि इन्द्र इत्यादि देवताओं के नाम लिये जाते हैं और याजक लोग सोमपान करने के लिये उनकी प्रार्थना और स्तुति करते हैं। फिर सूक्तों के कर्त्ता उन देवताओं से इस प्रकार के बिषयों के लिये बिनती करते हैं अर्थात् गौ आदि धन मुझको दान कर सङ्ग्राम से मुझको जयवन्त कर इत्यादि। जो जो देवते बिशेष करके आज कल भारतखण्ड में पूजे जाते हैं सो वेद के सूक्तों में उनका भजन नहीं होता है। जैसे राम कृष्ण महादेव दुर्गा काली भवानी उमा इत्यादि। ऋक् वेद के सूक्तों में उनका नाम भी नहीं आता है ब्रह्मा और विष्णु का यश कधी २ वर्णन होता है और रुद्र नाम किसी देवता की स्तुति कोई २ स्थल में मिलती है परन्तु उन मन्त्रों में विष्णु शब्द का अर्थ सूर्य्य है वुह विष्णु नहीं है जिसका वृत्तान्त पुराणों में मिलता है उसके अवतारों का कोई चिन्ह सूक्तों में कहीं नहीं देख पड़ता है पीछे से पण्डित लोगों ने इन समस्त कथाओं की कल्पना किई ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

आपका यह वृत्तान्त ऋक् वेद के प्रथम अष्टक के इन वचनों से क्योंकर मिल सक्ता है। अर्थात् ॥

इदं विचक्रमे विष्णुरित्यादि ॥

जैसे २२ सूक्त की १६ ऋचा में लिखा है ॥

अतो देवा अवन्तु नो यतो विष्णु र्विचक्रमे ॥
पृथिव्याः सप्त धामभिः ॥ १६ ॥ इदं विष्णु
र्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदं ॥ समूढमस्य पांसुरे
॥ १७ ॥ त्रीणि पदा विचक्रमे विष्णु र्गोपा
अदाभ्यः ॥ अतोधर्म्माणि धारयन् ॥ १८ ॥
विष्णोः कर्माणि पश्यत यतोव्रतानि पस्पशे ॥
इन्द्रस्य युज्यः सखा ॥ १९ ॥ तद्विष्णोः परमं
पदं सदा पश्यन्ति सूरयः ॥ दिवीव चक्षुराततं
॥ २० ॥ तद्विप्रासोविपण्यवोजागृवांसः समिंधते
॥ विष्णोर्यत्परमं पदम् ॥ २१ ॥ इति

अर्थात् देवगण पृथ्वी के उस भाग से जहां से विष्णु ने सात छन्दों के बल से गमन किया हमारी रक्षा करें ॥ १६ ॥ विष्णु ने जब इस जगत में गमन किया तो उसने तीन बेर अपने पांव रक्खे और सारा जगत उसके पांवों की धूर में छिप गया ॥ १७ ॥ विष्णु जो रक्षक और हानि रहित है उसने धर्म के कामों को सम्भालते हुए तीन पांव रक्खे ॥ १८ ॥ विष्णु जो इन्द्र का अनुकूल सखा है उसके कामों को देखो जिनके द्वारा धर्म्मी लोगों ने अपने व्रतों को पूर्ण किया ॥१९॥ ज्ञानी लोग विष्णु के उस परम स्थान को सदा देखते हैं जैसे खुला हुआ नेत्र स्वर्ग में स्पष्ट देखता है ॥ २० ॥ ज्ञानीलोग स्तुति में सावधान होकर विष्णु के उस परम स्थान के तेज को प्रगट करते हैं ॥ २१ ॥

क्या इन ऋचाओं में वामन अवतार की चर्चा नहीं है जिस में होके विष्णु ने तीन डगों से तीन लोकों को व्याप्त कर दिया इसी प्रकार से सायन आचार्य्य ने वेदार्थप्रकाश नाम अपनी प्रसिद्ध टीका में इन ऋचाओं का अर्थ खोला है ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

विवेकी लोग जो इसका मर्म जानते हैं कहते हैं कि इन ऋचाओं में सूर्य्य के उदय और अस्त और मध्यान्ह की चर्चा हुई । इस रीति से निरुक्तनाम ग्रन्थ के टीकाकर्त्ता दुर्गा आचार्य्य ने इनका अर्थ वर्णन किया है ॥

विष्णुरादित्यः कथमिति यत आह त्रेधा निदधे पदम् निधत्ते पदम् निधानम् पदैः क्व तत्र तावत् पृथिव्यामन्तरिक्षे दिवीति शाकपूणिः ॥ पार्थिवोऽग्निर्भूत्वा पृथिव्याम् यत्किञ्चिदस्ति तद्विक्रमते तदधितिष्ठति अन्तरिक्षे वैद्युतात्मना दिवि सूर्य्यात्मना ॥ यदुक्तम् तमू अकृण्वन् त्रेधा भुवेकमिति ॥ समारोहणे उदयगिरावुद्यन् पदमेकन्निधत्ते ॥ विष्णुपदे मध्यन्दिनेऽन्तरिक्षे गयशिरस्यस्तंगिराविन्त्यौर्णनाभ आचार्य्यो मन्यते ॥ एवं समूढमस्य पांसुरे ॥ अस्मिन्न प्यायने एतस्मिन्नन्तरिक्षे सर्वभूतवृद्धिहेतौ यन्मध्यमं पदं विद्युदात्मकं तत्समूढं अन्तर्हितं न नित्यं दृश्यते इति ॥

अर्थात् विष्णु किस प्रकार से सूर्य्य है इस कारण कि ऐसा कहा है कि उसने तीन बेर अपने पांव रक्खे अर्थात् पांव रखता है कहां रक्खे साकपूणि के मत के अनुसार पृथ्वी आकाश और स्वर्ग में अर्थात् जो कुछ पृथ्वी पर है पृथ्वी में अग्नि के रूप में हो कर बास करता है और आकाश में बिजली होके और स्वर्ग में सूर्य्य रूप होके जैसे कहा है ॥ तमू अकृण्वन् त्रेधा भुवेकमिति ॥ और्णनाभ आचार्य्य का यह मत है कि समारोहण

अर्थात् उदयाचल पर्वत पर उदय होते एक पांव रखता है और दूसरा मध्यान्ह समय विष्णु पद अर्थात् आकाश में और तीसरा गय के मस्तक अर्थात् अस्तंगिरि पर्वत पर। इस प्रकार से जो कहा है कि समूढमस्य पांसुरे॥ उसका अर्थ यह है कि इस अध्यायन अर्थात् आकाश में जो सब भूतों की वृद्धि का कारण है उसका जो बिजली रूप मध्यम पद है सो ढप गया है अर्थात् सदा देख नहीं पड़ता॥

उस बुद्धिमान् पण्डित के इस विवर्ण में वामन अवतार की कुछ भी चर्चा सूझ नहीं पड़ती है। इन ऋचाओं में विष्णु का जो परम स्थान वर्णन होता है उसका अर्थ सूर्य्य का आकाश में सब से ऊंचा स्थान अर्थात् मध्यान्ह है। इसके अनुसार आकाश का एक नाम विष्णु पद है और बोलचाल के इस व्यवहार से दुर्गा आचार्य्य का विवर्ण प्रमाणिक ठहरता है। इसके समान भी रुद्र शब्द का अर्थ वेदों में अग्नि है और उसका जो वर्णन है सो पुराणों के रुद्र से सर्वत्र भिन्न है॥

पण्डितजी इन वृत्तान्तों पर जिनकी चर्चा हम दोनों ने इस समय किई है ध्यान करने से मेरी समझ में यह बात प्रमाणिक और सिद्ध ठहरती है अर्थात् कि वेद के सूक्तकर्त्ता वे मनुष्य थे जिनके नाम वेदानुक्रमणिका नाम ग्रन्थ में लिखे हैं उनकी दैव्य उत्पत्ति का कोई लक्षण देख नहीं पड़ता और बुद्धि रूपी प्रमाण से सिद्ध नहीं हो सक्ती है। मन्त्रकर्त्ता अपने बाप दादों के देवों को जिनकी सेवा वे करते थे यज्ञ कर प्रसन्न करते थे और अपने कल्पे हुए स्तोत्रों से उनका यश गाते थे। ऐसे स्तोत्रों को पण्डित लोगों ने मन्त्र और सूक्त नाम ठहराया। आगे मैं सिद्ध कर चुका कि पुरुष सूक्त जिस में परमात्मा की स्तुति है समस्त और सूक्तों से बहुत नवीन है। परन्तु सम्वाद

करते २ अब आधी रात होने लगी है आपके कृपासंयुक्त और बिचारपूर्वक सत्सङ्ग से मुझको अति आनन्द प्राप्त हुआ इस समय आपको और कष्ट देना नहीं चाहिये आपकी इच्छा हो तो भोर काल हम इसी स्थान पर फेर सत्सङ्ग करेंगे और इस भारी प्रकरण की कुछ और चर्चा करेंगे ॥

वेदविद्वान् का वचन॥

वेदों का जो वर्णन आपने इस समय किया है सो कई २ बातों में मेरी पहिली समझ के बिरुद्ध है और इसका तात्पर्य्य मैं तुरन्त ग्रहण नहीं कर सक्ता हूं। फिर भी मैं मान लेता हूं कि आप एक बड़े सत्य बिचारी हैं और आपका वृत्तान्त निस्सन्देह बहुत ध्यान करने के योग्य है इस कारण मैं उस पर ध्यान करूंगा और जो कुछ मेरी बुद्धि में आवे बड़े आनन्द के साथ प्रातः काल को सत्सङ्ग करके आप पर प्रगट करूंगा ॥

ग्रन्थकर्त्ता का वचन ॥

इतनी बात कहते ही ये दोनों पण्डित परस्पर प्रणाम कर बिदा हो अपने २ घर को चले गये। परन्तु मैं थोड़े विलम्ब लों वहीं बैठ गङ्गा की सुन्दर धारा को देख रहा वह शुक्ल पक्ष का काल था और चांद का गोलाकार तेजोमय स्वरूप आकाश में बिराज्यमान हो चारों ओर अपनी कोमल किरण फैला गङ्गा में अपना प्रतिबिम्ब देख रहा था। यह दशा देख बहुत ध्यान कर मैं ने अपने मन में सोचा कि यह सुन्दर चांद एक बुद्धिमान् और सत्य बिचारी और धर्म्मी मनुष्य का दृष्टान्त हो सक्ता है। क्योंकि जिस रीति चांद सूर्य्य से जो उंजियाले का मूल है अपनी ज्योति पाय शून्य चुपचाप हो अपनी कोमल किरण

चारों ओर फैला सामर्थ भर समस्त और वस्तुओं को प्रकाश करता है उसी रीति सत्य धर्मी पुरुष परमात्मा से जो सत्यता का मूल है उंजियाला प्राप्त कर बड़ी नम्रता के सङ्ग अपने को औरों का सेवक जान अपना कोमल उंजियाला चारों ओर चमकावेगा। और जब किसी शुद्ध स्वभाव निर्पक्ष सत्य बिचारी पुरुष के सङ्ग सम्वाद करता तो उसके मन में उस रीति से अपना प्रतिबिम्ब देखेगा जिस रीति से कि चांद गङ्गा में अपना स्वरूप देखता है यों बिचारकर मैं अपने घर को सिधारा॥

मतपरीक्षा का द्वितीय सत्सङ्ग समाप्त हुआ॥

इति॥

तीसरा सत्सङ्ग

उपनिषद् और षट्दर्शनों की चर्चा॥

ग्रन्थकर्त्ता का वचन॥

दूसरे दिन के प्रातःकाल को जाग उठ मैं शीघ्रता करके उसी स्थान को चला गया जहां पहिले दिन वेदविद्वान् और सत्यार्थी सम्वाद करते थे। वहां पहुंचते ही मैं ने देखा कि वेद विद्वान् अकेला बैठा है उसके सत्य गुणि मुख में गम्भीरता और चिन्ता के लक्षण प्रसिद्ध थे और मैं तुरन्त जान गया कि यह बड़े सोच ध्यान में डूब रहा है इस कारण मैं ने उस से अकस्मात् भेंट नहीं किई परन्तु थोड़े बिलम्ब के पीछे मैं ने देखा कि सत्यार्थी चला आता है उसके आते ही दोनों मनुष्य प्रणाम कर कुशल पूछ आगे की रीति सम्वाद करने लगे॥

वेदविद्वान् का वचन॥

उस बृत्तान्त पर जो कल के सत्सङ्ग में आप ने किया बड़े ध्यान के साथ मैं ने सोचा है आपके प्रमाणों का उत्तर तो मैं नहीं दे सक्ता हूं परन्तु उन प्रमाणों का तात्पर्य्य अर्थात् कि वेद आदि शास्त्र की एक निरी लौकिक उत्पत्ति हुई एकाएकी मैं ग्रहण नहीं कर सक्ता हूं क्योंकि युवा अवस्था से मैं ने उन को ईश्वरवाणी मान लिया है। यह तो सच है कि उनके प्रमाणिक होने की परीक्षा जैसी चाहिये मैं ने नहीं किई है क्योंकि मैं समझता था कि ऐसा करना शास्त्रों के ज्ञान पूर्वक शिक्षा का अनादर करना होगा परन्तु अब मैं मान लेता हूं कि सत्य बात के जांचने में उसका किसी प्रकार का अनादर अथवा हिंसा नहीं हो सक्ती है इस कारण मैं आप से पूछता

हूं कि यदि शास्त्रों की ज्ञान पूर्वक शिक्षा ईश्वर की ओर से नहीं आई तो उसका मूल मनुष्य की स्वाभाविक बुद्धिमात्र में क्योंकर हो सके ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

आरम्भ में जब मनुष्यों का प्रथम पिता उत्पन्न हुआ तब अपनी बुद्धिशक्ति के समान ईश्वर का सत्य ज्ञान रखके उस की सेवा भली भांति करता था। परन्तु जब ईश्वर की आज्ञा भङ्ग करने से उसकी निर्दोषता और सिद्धि जाती रही तब से ईश्वर का सत्य ज्ञान भी घटता गया। इस बिरियां अब के अभिप्राय के लिये इतना ही कहता हूं आगे मनुष्य की उत्पत्ति का वृत्तान्त बिस्तार के साथ कहा जायगा। परन्तु जब इस देश में वेद के सूक्त रचे जाते थे तब ईश्वर का सत्य ज्ञान बहुत मिट गया था उस काल के मनुष्य सम्पूर्ण सृष्ट के कर्त्ता को जो अकेला नित्य अनन्त ईश्वर है बिसराके नाना प्रकार के देवों को मानने लगे। इस प्रकार का मिथ्या मत किस रीति से उत्पन्न हुआ पण्डितजी मैं अपना बिचार प्रगट करूंगा। आप सुनिये ॥

परमेश्वर ने अग्नि आदि अनेक अचेतन पदार्थों में एक बड़ी प्रतापी और तेजोमय शक्ति धरी है। अग्नि की असह्य ज्वाला से बड़े २ बन भस्म हो जाते हैं भयानक आंधियों से बड़े २ पेड़ उखड़ जाते हैं। जल की धारा के बलात्कार से गांव २ अपने निवासियों समेत नष्ट हो जाते हैं सूर्य्य के घोर तेज से भूमि तृण आदि फल जल जाते हैं। असीम गगन में सूर्य्य एक बड़े महाराजा की नाईं अपनी जगमगाती ज्योति से आकाश पृथ्वी को दैदीप्यमान करता हुआ गमन करता है। स्थिर ऋतु के अनुसार मेघ भी वर्षा से भूतल को सींचते हैं और सींची गोड़ी हुई भूमि नाना प्रकार का अन्न उपजाती है ॥

अग्नि वायु आदि पदार्थों में ऐसी शक्ति देख मनुष्य उनको चैतन्य ठहराके देवों के समान उनको पूजा करने लगे। इस प्रकार से साधारण लोग अज्ञानता के कारण अग्नि सूर्य्य मरुत वरुण आदिकों को देवता कर मानने लगे। और वेदों में इन देवताओं का छोटा बड़ा और तरुण वृद्ध होना भी वर्णन होता है। जैसा ऋक् वेद के २० सूक्त की १३ ऋचा में लिखा है॥

नमोमहद्भ्यो नमोअर्भकेभ्यो नमोयुवभ्यो नमआशिनेभ्यः यजाम देवान् यदि शक्नुवाम माज्यायसः शंसमावृक्षि देवाः॥ १३॥

अर्थात् देवों में जो बड़े हैं उनको नमस्कार। और जो छोटे हैं उनको नमस्कार। और जो तरुण हैं उनको नमस्कार। और जो वृद्ध हैं उनको नमस्कार। हम अपने सूक्तों के अनुसार सब देवों की पूजा करेंगे हे देवो। मैं ज्येष्ठ नाम देवों के स्तोत्रों को भङ्ग न करूं॥

आप विचार कीजिये कि इस प्रकार का वृत्तान्त ईश्वर के सत्य ज्ञान के अनुसार है कि उसके विरुद्ध॥

वेदविद्वान् का वचन॥

मैं तो नहीं कह सक्ता हूं कि अग्नि वायु ईश्वर ही हैं परन्तु उन से ईश्वर की शक्ति प्रकाश होती है। और उनकी पूजा करने का यही अभिप्राय है अर्थात् उनके द्वारा ईश्वर की सेवा किई जाती है॥

सत्यार्थी का वचन॥

आप तो ऐसा कहते हैं परन्तु सूक्तों की रचना के डौल से ऐसा अर्थ कधी नहीं निकल सक्ता है। इसके विरुद्ध यह प्रत्यक्ष और स्पष्ट देख पड़ा है अर्थात् कि सूक्तकर्त्ता उन पदार्थों को

चैतन्य जानते थे नहीं तो उन से बिनती और स्तुति किस लिये करते थे। और जब कि यह सब देव केवल कल्पना है सचमुच कुछ चैतन्य अथवा जीवती बस्तु है नहीं तो सिद्ध है कि उनकी स्तुति के मन्त्र भी मनुष्य के कल्पे हुए हैं। और जैसे वेदानुक्रमणिका के कर्त्ता ने उनके कल्पनेहारे ऋषियों के नाम लिखे हैं तैसे ऋक् वेद के पहिले सूक्त में उन ऋषियों के दो भाग किये गये हैं अर्थात् प्राचीन और नवीन ॥ जैसे ॥

अग्निः पूर्वेभिरृषिभिरीड्यो
नूतनैरुत सदेवान् एह वक्षति ॥ इति ॥

अर्थात् वह अग्नि जिसकी स्तुति पुराने और नये ऋषि भी करते हैं देवों को यहां ले आवे ॥

निदान जिस प्रकार से कोई २ मन्त्रकर्त्ता प्राचीन और नवीन थे इसी प्रकार से पण्डितजी कोई २ मन्त्र भी आप प्राचीन और नवीन थे इसके अनुसार २० सूक्त की ४ ऋचा में शुनःशेप सूक्तकर्त्ता अपने मन्त्र की नवीनता आप प्रचारता है ॥ जैसे ॥

इममूषु त्वमस्माकं सनिं गायत्रं नव्यांसं
अग्ने देवेषु प्रवोचः इति ॥

अर्थात् हे अग्नि तू हमारे इस अर्पण और नये स्तोत्र को भी देवों के आगे कह ॥

और इस दशा का कारण भी बतलाना कुछ कठिन नहीं है क्योंकि जब कोई राजा अथवा गृहस्थ औसर पाके यज्ञ करने चाहता था तब अपने उपयोग का एक सूक्त किसी कवि से बनवाता था। सूक्तों का अर्थ बिचार करने से जाना जाता है कि इसी रीति से प्रयोजन के काल के समान बहुतेरे मन्त्र रचे गये क्योंकि राजाओं के नाम और अपने शत्रुओं से उनका सङ्ग्राम और विजय बार २ सूक्तों में बखान होते हैं। इन

सूक्तों का वही स्वरूप आज लों देख पड़ता है जैसे आरम्भ में प्राचीन पुरोहितों ने उनको बनाया था । उनकी रचना में पुरोहितों का अभिप्राय केवल देवताओं की स्तुति करना था किसी विशेष मत का पक्ष उन में दृष्ट नहीं आता है । और सूक्तकर्त्ता अपने मन्त्र के कल्पने के समय ऐसी भावना कधी नहीं करता था कि देवताओं की स्तुति में जो स्तोत्र मैं कल्पता हूं सो ब्रह्मा से उत्पन्न हुए इस कारण से उन्हों ने अपने ही काल का वृत्तान्त और सङ्ग्राम और विजय इत्यादि राजाओं के नाम के साथ अपने सूक्तों में बखान किया है ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

यदि यह दशा है तो आप बतलाइये कि उनका ऐसा आदर और सन्मान पीछे से क्योंकर हो गया ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

जब बहुत काल बीतने के कारण ये सूक्त पुराने हो गये थे तब प्राचीनता के हेतु पण्डित लोग उनका आदर करने लगे तिस पर औरों ने भूल करके उनको ब्रह्मा का उच्चारा हुआ ठहराया । सूक्तों के अर्थ से इस भावना के मेल करने में यद्यपि युक्ति करते तो थे परन्तु नहीं कर सके । और पण्डितजी ऐसे सूक्तों को जिनका यह अर्थ और वृत्तान्त है अनादि अथवा ब्रह्मा का उच्चारा हुआ मानना बुद्धिमान् सत्यार्थी पण्डित के योग्य नहीं है ॥

आरम्भ में वैदिक सूक्तों की संहिता नहीं हुई परन्तु पुरखे लोगों के मुख से जैसे कहे जाते थे तैसे भारतखण्ड में प्रचलित थे । सम्भव है कि वशिष्ठ आदि ऋषियों के सूक्त प्रथम उन

ऋषियों के सन्तान ने यत्न से उनके सूक्तों की रचा किई जैसे बिश्वामित्र केने भी और जब यों परम्परा से होके पुराने हो गये थे तब साधारण लोग उनका बड़ा आदर करने लगे। इस जगत में जब कोई बस्तु बहुत पुरानी हो जाती है तब बहुतेरे मनुष्य उसको बड़े आश्चर्य्य से देखते और उसका आदर करते हैं। इस कारण विवेकी को कुछ अचम्भे की बात नहीं होगी कि साधारण लोग वैदिक सूक्तों को देववाणी मानने लगे। इसी प्रकार से उन प्राचीन पुरोहितों को भी जो सूक्तों के कर्त्ता थे ईश्वर कहते थे। उसी काल में व्यास पैल आदिकों ने सम्पूर्ण सूक्तों को जैसे मनुष्यों के स्मरण में रहे थे और जहां कहीं फैल गये थे सङ्ग्रह करके उनकी संहिता किई। सूक्तों के सङ्ग्रह करने से उसका नाम व्यास ठहरा जिसका अर्थ है सङ्ग्रहकर्त्ता। व्यासों का सब से पिछला सङ्ग्रहकर्त्ता कृष्णद्वैपायन बतलाया जाता है उस से पहिले कितने और भी थे पुराणों में यही कथा है। परन्तु क्या सत्य है कि नहीं कोई नहीं जानता क्योंकि पुराणों का वृत्तान्त वेद की महिमा बढ़ाने के लिये कल्पा गया और यथार्थ समाचार नहीं मिलता है॥

जब अपने शिष्यों की सहायता से व्यासजी ने ऋक् आदि वेदों की संहिता किई तब आर्य्य लोगों की भाषा आगे के समान गंवारी न थी। पण्डितों के साधन और युक्ति से मंजते २ उस भाषा का एक नया स्वरूप हो गया था जिस काल व्यास आदिकों के हाथ से सूक्तों की संहिता हो गई उसी काल भी वे सूक्त बहुधा अति प्राचीन हो गये थे। परन्तु सभों की उत्पत्ति सम कालिक जानना नहीं चाहिये क्योंकि काल आदि वृत्तान्त के अन्तर के साथ क्रम २ से रचे गये और सङ्ग्रह करनेहारे पण्डितों ने कई एक नये भी सूक्त प्राचीनों के साथ मिलाये॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

आपने तो आगे कहा था कि पुरुष सूक्त की भाषा इस प्रकार से और सूक्तों से नवीन देख पड़ती है ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

सच वह सूक्त उसी काल में जब प्राचीन सूक्तों की संहिता हो गई अथवा उसके समीप बन गया । ऐसा कि उस काल में पुरुष सूक्त नवीन था और चारों वेदों का यथार्थ वृत्तान्त पण्डित जो यही है जो मैं अभी कहता हूं अर्थात् ॥

१ ऋक् वेद में जिन २ सूक्तों की संहिता है उस वेद में उनका प्रथम स्वरूप देख पड़ता है । अर्थात् वही स्वरूप जिस में पुरोहितों ने आरम्भ में उनको बनाया ॥

२ सामवेद में जो सूक्त सामन कहलाते हैं सो बहुधा ऋक् वेद के भाग हैं । ऋक् वेद की ऋचा में अनेक भांति से छिन्न भिन्न हो साम वेद में उद्गाता के गाने के लिये सामन ठहरते हैं ॥

३ यजुर्वेद में भी जो २ सूक्त सङ्ग्रह किये गये हैं सो बहुधा ऋक् वेद के भाग हैं पर यजुर के लिये उनका स्वरूप कुछ बदल गया है ॥

४ अथर्वण वेद के सूक्त बहुधा और तीन वेदों से भिन्न हैं कितनों का अर्थ शत्रुओं को शाप देना है कितने कर्त्ता की रक्षा के लिये कल्पे हैं और कितनों में दर्व आदि बनस्पति के सम्बोधन हैं । अथर्वण के वृत्तान्त पर बिचार करने से विवेकी लोग कहते हैं कि उसके बहुतेरे सूक्त ऋक् वेद के सूक्तों से नवीन हैं ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

सूक्तों का जो वृत्तान्त आपने किया कि अग्नि आदि देवताओं के स्तोत्र हों परमेश्वर के सत्य ज्ञान के बिरुद्ध है सो उपनिषद्

के बिषय में ठीक नहीं आता है क्योंकि उपनिषदों में इन देवताओं का इतना भजन नहीं है बिशेष करके परमात्मा का भजन किया जाता है ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

आपका कहना यथार्थ है और इसका कारण यह है जब वेदों की संहिता बन चुकी और प्रचलित हो गई थी तब पण्डितों ने बड़े यत्न से उनका अभ्यास किया। और सब से प्रसिद्ध और बड़े २ पण्डित अपनी २ निपुणता के समान उनका अर्थ खोलने लगे। इसी प्रकार से व्याकरण आदि वेद के सब अङ्ग जो वेद की व्याख्या के उपयोगी हैं क्रम २ से रचे गये। उस काल के पीछे इस देश के निवासी ऐसी २ विद्या में कुछ प्रवीणता प्राप्त कर अनेक भांति के गूढ़ २ वादों में प्रवृत्त होने लगे। यह जगत कैसे उत्पन्न हुआ क्या वह अनादि है अथवा उसका आदि था क्या उसका कोई कर्त्ता है और उसने किस बस्तु से संसार को बनाया क्या उसके कर्त्ता का कोई आकार है अथवा वह निराकार है क्या वह सगुण है किम्वा निर्गुण ऐसे २ बिषयों के ज्ञान पाने के अभिलाषी हो पण्डित लोग विवेचना करने लगे और इन बातों के प्रकरण में ज्ञानियों की स्वाभाविक बुद्धिमात्र की सामर्थ्य से उपनिषद् रचे गये। उस काल से उन देवताओं की महिमा जिनका आदर बिशेष करके सूक्तों में है क्रम २ से घटने लगी और यद्यपि उपनिषदों में अग्नि इन्द्र आदि की कुछ प्रशंसा तो है तथापि ब्रह्म के जो परमात्मा और पुरुष नामों से कहलाता है महत्त्व की प्रशंसा अधिक देख पड़ती है। इस्से यह बात प्रगट है कि उपनिषद्

के बनानेवाले ब्रह्म को इन्द्र अग्नि आदि से श्रेष्ठ मानते थे तिसके पीछे जब ऐसे बिषयों में पण्डितों की विवेचना भिन्न २ हो गई तब मुनियों ने अनेक २ मत अपनी २ भावना के समान इस देश में चलाये। इस प्रकार से षट्दर्शन उत्पन्न हुए जो पण्डितों और मुनियों की बुद्धिमात्र के अनुसार स्थापन किये गये॥

वेदविद्वान् का वचन॥

आप तो कहते हैं कि इन बड़े मुनियों के शास्त्र केवल उनकी स्वाभाविक बुद्धिमात्र से रचे गये कुछ ईश्वरवाणी नहीं हैं परन्तु मैं आप से पूछता हूं कि आपके पास इस बात का कुछ प्रमाण है॥

सत्यार्थी का वचन॥

पण्डितजी बिना प्रमाण से किसी बात को सत्य मानना नहीं चाहिये इस कारण मैं कहता हूं कि इन शास्त्रों को ईश्वरवाणी मानना नहीं चाहिये क्योंकि इस बात का कोई प्रमाण नहीं है और उनको मनुष्य का बनाया हुआ मानना चाहिये क्योंकि इस बात का प्रमाण प्रत्यक्ष है वेदान्त न्याय साङ्ख्य आदि शास्त्रों में अनेक भांति की परस्पर बिरुद्धता देख पड़ती है और इस दशा में उनको ईश्वरवाणी मानना बुद्धि के बिरुद्ध है। व्यास का मत यह है कि जगत का निमित्त कारण ब्रह्म है और उसका उपादान कारण भी वही है और केवल ब्रह्म मात्र नित्य है। कपिल मुनि कहता है कि मूल प्रकृति नित्य है और अपने से अपने को पसारके जगत को उत्पन्न करती है उसकी भावना यह है कि ईश्वर कोई है नहीं परन्तु पतञ्जलि कहता है कि एक ईश्वर है जो संसार का सिरजनेहारा है। फिर गौतम का

मत यह है कि ईश्वर अति सूक्ष्म परमाणुओं को जो नित्य हैं लेके उन से संसार को बनाता है। ये सब शिक्षक भारतखण्ड में मुनि के नाम से प्रसिद्ध हैं और एक २ कहता है कि मेरे ही मार्ग से मुक्ति प्राप्त होती है क्योंकि सत्य है। सो मैं आप से पूछता हूं कि क्या सत्य असत्य में कुछ भेद है कि दोनों एकी हैं आप जो सत्य बिचारी हैं अवश्य कधी नहीं कहेंगे कि दोनों एकी हैं भला तो जब भेद है तो ये सब के सब सत्य नहीं हो सक्ते फिर कौन बतलावेगा कि ऐसे भिन्न और बिरुद्ध मतों में सत्य क्या है और असत्य क्या है और कौन सत्य बिचारी मानेगा कि ये सब के सब ईश्वरवाणी हैं॥

वेदविद्वान् का वचन॥

कितने कहते हैं कि जैमिनि और व्यास को छोड़ कोई दर्शनकर्त्ता सर्वथा प्रमाणिक नहीं है जैसा लिखा है॥

अक्षपादप्रणीते च काणादे: साङ्ख्ययोगयो:
त्याज्य: श्रुतिबिरुद्धोंश : श्रुतैकशरणैर्नृभि:॥
जैमिनीये च वैयासे बिरुद्धांशोन कश्चन इति॥

अर्थात् जिन पुरुषों को केवल वेद का भरोसा है उनको चाहिये कि अक्षपाद अर्थात् गौतम के बनाये शास्त्र में और काणादि के साङ्ख्य और योग शास्त्र में जितना वेद से बिरुद्ध भाग है उतना छोड़देना परन्तु जैमिनि और व्यास के शास्त्र में कोई अंश वेद के बिरुद्ध नहीं है॥

सत्यार्थी का वचन॥

ऐसा तो कहते हैं परन्तु पण्डितजी इस में एक यह शङ्का होती है कि यदि एक मुनि भूले तो औरों का भ्रम करना क्या

असम्भव है कपिल आदि मुनियों से व्यासजी की क्या बड़ाई है यदि वे भूलें तो उसका प्रमाण क्या। मीमांसक लोग तो ऐसा कहते हैं कि जैमिनि और व्यास का मत वेद के अनुसार और औरों का मत वेद के बिरुद्ध है परन्तु इसका क्या प्रमाण है और यद्यपि यह वचन यथार्थ भी हो तथापि मैं आप से पूछता हूं कि जिन ऋषियों ने वेद को भी बनाया सो कपिल आदिकों से उनका क्या बिशेष है यदि कपिल आदिकों का प्रमाण सिद्ध नहीं हो सक्ता तो वेद के ऋषियों का प्रमाण क्यों कर सिद्ध होवे और इस दशा में वेद के अनुसार होना जैमिनि और व्यास के लिये क्या प्रमाण ठहरेगा॥

वेदविद्वान् का वचन॥

अनेक शास्त्रों में कपिल की भी महिमा बखानी है और लिखा है कि उसने सगर के पुत्रों को जलाके भस्म कर दिया जैसा रामायण बाल काण्ड के ४१ सर्ग में कहा है॥

श्रुत्वा तद्वचनं तेषां कपिलोरघुनन्दन
रोषेण महता ऽविष्टोहूंकारमकरोत् तदा॥
ततस्तेनाप्रमेयेण कपिलेन महात्मना
भस्मराशीकृताः सर्वे काकुत्स्थ सगरात्मजाः इति॥

हे रघुकुल के आनन्द देनेहारे उनका यह वचन सुन कपिल मुनि बड़े क्रोध से भर गया और हुङ्कार किया तब उस अति वीर्य्य महात्मा कपिल ने सगर के सब पुत्रों को भस्म की ढेरी कर दिया॥

सत्यार्थी का वचन॥

आपका कहना ठीक है और इससे अधिक भागवत में जिस को कितने कहते हैं कि व्यास का बनाया है उसको और भी

स्तुति किई जाती है। जो वृत्तान्त आपने अभी कहा है उसके विषय में लिखा है कि कपिल के समान ऐसे महामुनि पर क्रोध का आरोप किया नहीं चाहिये ॥

न साधुवादो मुनिकोपभर्जिता नृपेन्द्रपुत्रा इति सत्वधामनि
कथं तमोरोषमयं विभाव्यते जगत्पवित्रात्मनि खे रजोभुवः ॥
यस्येरिता साङ्ख्यमयी दृढेहनौर्यया मुमुक्षुस्तरते दुरत्ययं
भवार्णवं मृत्युपथं विपश्चितः परात्मभूतस्य कथं पृथङ्मतिरिति ॥

अर्थात् उस सत्य गुण के निवास में यह कहना ठीक नहीं है कि राजा के बेटे मुनि के क्रोध से भस्म किये गये क्योंकि उस में जो जगत का पवित्र आत्मा है क्रोध रूपी तम की कैसी शङ्का हो जैसे भूमि की धूलि की आकाश में जिसने साङ्ख्य शास्त्ररूपी दृढ़ नौका बनाई जिसे मोक्ष के खोजी पाकर दुस्तर संसाररूपी समुद्र से जो मृत्यु का मार्ग है तर जाते हैं ऐसा महाज्ञानी परमात्मा रूपी मुनि कैसे अल्पबुद्धि हो ॥

अब आप बिचार कीजिये कि यदि व्यासजी ने जैसा बहुतेरे कहते हैं भागवत को बनाया तो उसने आप कपिल का कैसा बखान किया उसने यह कहा है कि उस परमात्मा कपिल ने साङ्ख्यरूपी जो नाव बनाई उस से मनुष्य तर जाते हैं फिर जो कपिल मुनि सचमुच परमात्मा है तो उसका शास्त्र निष्प्रमाण होना किस प्रकार से सिद्ध हो सक्ता है और जो साङ्ख्य दर्शन से जिसे उसने स्थापन किया मोक्ष प्राप्त होता है तो उसके प्रमाणिक होने पर किस प्रकार से सन्देह हो सक्ता है। इस कारण जो २ पण्डित भागवत का प्रमाण मानते हैं उनको कपिल का प्रमाण भी सम्पूर्णरूप से मानना चाहिये। फिर भागवत में यह भी लिखा है कि भगवान् ने अपने पांचवें अवतार में कपिल

का रूप धारणकर साङ्ख्य शास्त्र को दिया जैसे प्रथम स्कन्ध के ३ अध्याय के १० श्लोक ॥

पञ्चमः कपिलोनाम सिद्धेशः कालविप्लुतम्
प्रोवाचाऽऽसुरये साङ्ख्यं तत्वग्रामविनिर्णयम् इति ॥

अर्थात् पांचवां कपिल नाम अवतार जो सब सिद्धों में श्रेष्ठ है उसने साङ्ख्य शास्त्र को जिस में तत्वों का निर्णय किया है आसुरि से कहा ॥

इस प्रकार से शास्त्रों के अनुसार कपिल और व्यास मुनियों के और वेदान्त और साङ्ख्य शास्त्रों के प्रमाण दोनों समान हैं ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

परन्तु इन दोनों में ठीक विरुद्धता देख पड़ती है सो दोनों के दोनों सत्य क्योंकर होवें ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

हां । यही तो बात है पण्डितजी क्योंकि व्यास कहता है कि ईश्वर है कपिल कहता है कि ईश्वर नहीं है फिर इन दोनों मुनियों और दर्शनों का प्रमाणिक होना शास्त्रों में लिखा है मेरी बुद्धि में भी नहीं आता है कि ये दोनों के दोनों सत्य क्योंकर होवें यदि वेदान्त सत्य है तो साङ्ख्य असत्य होगा और यदि साङ्ख्य सत्य है तो वेदान्त असत्य होगा परन्तु जिस शास्त्र में इन दोनों विरुद्ध बातों का सत्य और प्रमाणिक होना लिखा है मैं आप से पूछता हूं कि उस शास्त्र को ईश्वर वाणी अथवा मनुष्य की दोषी बुद्धि की कल्पना मानना चाहिये ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

आपने तो उनके लिये जो शास्त्रों को मानते हैं एक जाल फैलाया जिस से निकल जाना कठिन है मैं आगे जानता था कि शास्त्रों की कितनी २ बातें पहिले दृष्टि से बिरुद्ध देख पड़ती हैं परन्तु मैं ने यह समझा कि कदाचित् मेरी बुद्धि की निर्बलता के कारण बिरुद्ध देख पड़ती है सचमुच बिरुद्ध नहीं है। आपने जो ऐसा स्पष्ट और यथार्थ वर्णन किया है मैं इसका उत्तर देना नहीं जानता हूं और आपके जाल से निकल नहीं सक्ता हूं ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

हे मित्र एक जाल तो है परन्तु आप न कहिये कि मैं ने उसको लगाया जाल तो शास्त्र आप ही है एक ऐसा जाल जिस से निकल जाना अनहोना है। जब कि हम इन शास्त्रों को केवल मनुष्य रचित पुस्तक जानते हैं तो इस प्रकार की बिरुद्धता कुछ आश्चर्य्य की बात नहीं है ऐसे गूढ़ २ बिषयों में मनुष्य की विवेचना अवश्य ऐसी ही होगी क्योंकि उसकी बुद्धि की इतनी सामर्थ नहा है कि सम्पूर्ण रूप से उनको समझ सके परन्तु जब इन शास्त्रों को ईश्वरवाणी मानते हैं तब ऐसी अयोग्य बातों का विवर्ण करना अत्यन्त कठिन है। क्योंकि उस दशा में इन तीनों को छोड़ और कोई परिणाम सिद्ध नहीं हो सक्ता है अथवा यह कि सत्य और मिथ्या का कुछ भेद नहीं है दोनों एकी हैं किम्वा परमेश्वर सत्य और मिथ्या का भेद नहीं जानता अथवा परमेश्वर उनका भेद जानके मनुष्य जान को जान बूझके धोखा देता और जाल में फंसाता

है। और ये तीनों बातें परमेश्वर के लिये ऐसी अयोग्य और निन्दा पूर्वक हैं कि कोई भला धर्म्मी पुरुष उनको ग्रहण कधी न करेगा॥

वेदविद्वान् का वचन॥

क्या एक बात और यह भी नहीं है कि इन में से एक मत को जो बिचार करने से सत्य देख पड़ता है ग्रहण करके ईश्वर वाणी मान लेना॥

सत्यार्थी का वचन॥

कितने तो ऐसा ही करते हैं परन्तु मैं आप से पूछता हूं कि किसी के निरे मानने से क्या कोई मत ईश्वरवाणी ठहरेगा हम तो प्रमाण की न कि भावना की चर्चा करते हैं। एक की भावना दूसरे के समान होगी और इस रीति से जितनी अज्ञानता और बिरुद्धता है सब की सब प्रमाणिक हो सक्ती है। साङ्ख्य न्याय आदि दर्शनों को तो तीक्ष्णबुद्धि पण्डितों ने अपनी बुद्धिमात्र से निर्माण किया और और पण्डितों ने जिनकी बुद्धि की इतनी सामर्थ्य न थी परन्तु काव्य की कुछ शक्ति रखते थे साधारण लोगों के लिये इतिहासों और पुराणों को बनाया। जिस प्रकार से षट्दर्शनों की परस्पर बिरुद्धता है उस प्रकार से पुराण उपपुराणों में भी अनेक भांति के भिन्न २ मत देख पड़ते हैं। कितने तो शैव हैं। कितने वैष्णव इत्यादि। इस से जाना जाता है कि ये भी एक ही दैव्य मूल से उत्पन्न नहीं हुए बरन भिन्न २ पुरुषों ने क्रम २ से उनको बनाया। क्योंकि बुद्धि में नहीं आता है कि वह शास्त्र जिसे सर्वज्ञानी परमे-

श्वर ने दिया हो सो किसी प्रकार की बिरुद्धता अथवा बिप-रीतता प्रकट करे । परन्तु आपकी इच्छा हो तो इस समय पुराणों की चर्चा छोड़ देंगे और सांझ काल को इसका बिचार करेंगे ॥

ग्रन्थकर्ता का वचन ।

तिस पर हम तीनों मनुष्य बिदा हो अपने २ स्थान को प्रस्थित हुए ॥

मतपरीक्षा का तृतीय सत्सङ्ग समाप्त हुआ ॥

इति ॥

चौथा सत्सङ्ग ॥

इतिहासों और पुराणों की चर्चा ॥

ग्रन्थकर्त्ता का वचन ॥

उसी दिन सांझ काल को जब वेदविद्वान् और सत्यार्थी की भेट हुई तो आगे की रीति में भी उपस्थित हुआ क्योंकि इन दो पण्डितों के सम्वाद से जो हो चुके थे मैं बड़ा प्रसन्न था और उनकी ज्ञानपूर्वक चर्चा से कितनी एक नई २ बातें भी मैं ने सीखी थीं और पुराणों का यथार्थ वृत्तान्त सुनने को निपट अभिलाषी था। क्योंकि मैं जानता था कि बिशेष करके पुराणों ही की शिक्षा पर भारतखण्ड के साधारण निवासी चलते हैं और उनकी अद्भुत कथाएं अनपढ़े लोगों में भी बड़े बल के साथ परन्तु अशुद्ध रीति से प्रचलित हैं इस कारण मैं इन कथाओं का सत्य मूल और यथार्थ वृत्तान्त सुनने चाहता था तब पुराणों के बिषय में ये दो पण्डित सम्वाद करने लगे ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

आपकी कृपा से हम दोनों ने वेद और उपनिषद और षट्दर्शनों के शास्त्रों की चर्चा भली भांति किई है और इस चर्चा से यह अनुभव सिद्ध ठहरा कि पूर्व काल में बड़े २ ऋषियों और मुनियों ने अपने २ ज्ञान के अनुसार और अपनी २ बुद्धिमात्र की शक्ति से उन शास्त्रों को बनाया और यद्यपि उन शास्त्रों में कितनी ऐसी बातें मिलती हैं जो अविवेकी और अनपढ़े लोगों की दृष्टि में दैव्य देख पड़ती हैं तथापि बिचार

करने से उनकी दैव्य उत्पत्ति का कोई प्रसिद्ध लक्षण अथवा प्रत्यक्ष प्रमाण कहीं नहीं देख पड़ता है इसके विरुद्ध मनुष्य के कार्य्य के चिन्ह जितने चाहियें दृष्टि आते हैं। अब पुराणों की चर्चा रह गई है सो आप कृपा करके बतलाइये कि कोई बिशेष लक्षण है कि नहीं जिस्से पुराण पहचाना जाय ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

हां ऐसा लक्षण तो है स्पष्ट और देवों की बंशावली और राजाओं के चरित्र आदि पांच बिषय हैं जो पुराणों के लक्षण ठहरते हैं जैसा लिखा है ॥

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वतराणि च
वंशानुचरितं चैव पुराणं पञ्चलक्षणम् इति ॥

अर्थात् उत्पत्ति और प्रलय वंश और मन्वन्तर और वंशों का चरित्र ये पांच पुराणों के लक्षण हैं ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

अब आप कहिये कि ये पांच लक्षण सारे अठारह पुराणों में मिलते हैं कि नहीं ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

नहीं मैं नहीं कह सक्ता हूं कि ये सारे लक्षण किसी एक पुराण में मिलते हैं इस बिषय में और पुराणों की अपेक्षा विष्णु पुराण श्रेष्ठ है परन्तु उस में भी पांचों लक्षण सम्पूर्ण रूप से नहीं मिलते हैं ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

आप तो सच कहते हैं कि जो इन दिनों में पुराण कहलाते हैं उन में से एक भी ऐसा नहीं है जो पांच लक्षणों के अनुसार पुराण ठहरेगा और इस दशा में सत्यार्थी को निस्सन्देह बड़े बिचार की बात होगी कि क्या सचमुच कोई सत्य पुराण इन दिनों में उपस्थित है कि नहीं। यदि पांच लक्षणों की कसौटी ठीक नहीं है तो किस लिये इसका वर्णन हुआ और यदि ठीक है तो सच्चा पुराण कहां रहा परन्तु इस बात को छोड़ क्या कहीं कोई सूचीपत्र है जिस्से विद्यार्थी निश्चय जाने कि अठारह पुराण कौन हैं ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

हां सारे पुराणों में सभों का सूचीपत्र मिलता है जिस्से सब कोई जान सक्ता है कि अठारह पुराण कौन हैं ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

क्या ये सूचीपत्र सब समान हैं कि उन में कुछ भेद है ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

कुछ भेद तो है क्योंकि किसी में एक नाम के स्थल पर दूसरा नाम आता है और पण्डितों में कुछ विवाद भी है कि अठारह पुराण कौन हैं ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

इस दशा में सूचीपत्र से ऐसा बड़ा लाभ जैसा चाहिये नहीं निकलता है और यह भी आश्चर्य्य की बात है कि अठा-

रह पुराणों का सूचीपत्र अठारह ही पुराणों में क्योंकर होवे यदि सब के सब एक ही समय में लिखे जाते तो आश्चर्य्य की रीति से यह हो सक्ता परन्तु सूचीपत्रों का भेद उस भावना से नहीं मिलता और और वृत्तान्त से भी प्रत्यक्ष है कि सब के सब एक ही काल में नहीं लिखे गये तो जो पहिला लिखा गया औरों के नाम जो उस समय उपस्थित भी न थे उस में क्योंकर लिखे गये परन्तु कदाचित् कोई और प्रकार है जिस्से निश्चय हो सक्ता कि जो इन दिनों में पुराण कहलाते हैं सो सचमुच पुराण हैं ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

हां मत्स्य पुराण में एक २ पुराण का संक्षेप वर्णन लिखा है और एक २ में कितने २ स्लोक हैं यह भी उसी पुराण में लिखा है ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

ऐसा तो लिखा है परन्तु आपको इस बात का ज्ञान भी होगा कि जो २ पुराण इन दिनों इस देश में प्रचलित हैं उन का वृत्तान्त मत्स्य पुराण के संक्षेप वर्णन से नहीं मिलता । और उनके स्लोकों की सङ्ख्या भी मत्स्य पुराण के अनुसार नहीं है उदाहरण की रीति में दो पुराणों का अर्थात् भविष्य और ब्रह्मवैवर्त्त का संक्षेप वर्णन जो मत्स्य में मिलता है कहूंगा जैसा ॥

यत्राधिकृत्य माहात्म्यमादित्यस्य चतुर्मुख:
अघोरकल्पवृत्तान्तप्रसङ्गेन जगत्स्थितम् ॥
मनवे कथयामास भूतग्रामस्य लक्षणम्
चतुर्दशसहस्राणि तथा पञ्चशतानि च
भविष्यं चरितप्रायं भविष्यं तदिहोच्यते इति ॥

अर्थात् जहां ब्रह्मा ने सूर्य्य की महिमा के वर्णन का आरम्भ कर भूतों का लक्षण जो जगत में वर्त्तमान हैं अघोर नाम कल्प के वृत्तान्त के प्रसङ्ग से मनु से कहा उस में चौदह सहस्र पांच सौ श्लोक हैं और जिस में प्राय होनेहार बातें हैं उस भविष्य को यहां कहते हैं फिर ॥

रथन्तरस्य कल्पस्य वृत्तान्तमधिकृत्य यत्
सावर्णिना नारदाय कृष्णमाहात्म्यसंयुतं
यत्र ब्रह्मवराहस्य चरितं वर्ण्यते मुहुः
तदष्टादशसाहस्रं ब्रह्मवैवर्त्तमुच्यते इति ॥

अर्थात् जहां सावर्णि मनु ने रथन्तर नाम कल्प के वृत्तान्त का आरम्भ करके ब्रह्मा बाराह का चरित्र जिस में कृष्ण की महिमा है बार २ नारद जी से वर्णन किया और जिसकी सङ्ख्या अठारह सहस्र है वह ब्रह्मवैवर्त्त कहलाता है ॥

अब आप जानते हैं जो इन दिनों में भविष्य पुराण कहलाता है उस में भविष्यत् का बहुत ही थोड़ा वर्णन देख पड़ता है। और जो ब्रह्मवैवर्त्त अब उपस्थित है उसका कहनेवाला सावर्णि नहीं था नारायण मुनि था। और उस में रथन्तर कल्प का कुछ भी वृत्तान्त नहीं मिलता है। उन पुराणों के बिचार करने से मेरे ये वचन सत्य ठहरेंगे ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

आपका कहना तो सच्च है मैं जानता हूं परन्तु कितने पण्डित इसका कारण यों बतलाते हैं कि प्राचीन पुराणों का जो पहिला वृत्तान्त था सो बहुत लुप्त हो गया और उन में नया २ वृत्तान्त मिल गया है ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

भला इस दशा में आप बिचार कीजिये कि पुराणों का जो वृत्तान्त अब उपस्थित है किस रीति से बिश्वास योग्य ठहरेगा। यदि पहिला वृत्तान्त यथार्थ था तो अब का वृत्तान्त यथार्थ क्योंकर हो सक्ता है और जो अब का वृत्तान्त यथार्थ है तो पहिला वृत्तान्त यथार्थ क्योंकर हुआ। परन्तु अनेक और प्रमाणों से सिद्ध है कि पुराणों का वृत्तान्त बिश्वास योग्य नहीं है। पण्डित जी आर्य्यों कुल का यथार्थ इतिहास जो वेद आदि पुस्तकों से निकालके मैं ने आगे कहा सो पुराणों में स्पष्ट और यथार्थ रूप से नहीं लिखा है। इसका कारण यह है कि पूर्व काल का प्रथम वृत्तान्त ग्रन्थों में नहीं लिखा गया परम्परा से होके पुत्रों ने अपने पितरों के मुख से सुना। जो कुछ वृत्तान्त इस प्रकार से पुरखे लोगों के मुंह से जाना जाता है सो सदा थोड़े बिलम्ब के पीछे बदल जाता है। जो कुछ किसी ने युवा अवस्था में दूसरे के मुख से सुना है इसके पीछे उसका सम्पूर्ण वृत्तान्त बिस्तार के साथ स्मरण नहीं कर सक्ता है। फिर जब अपने बुढ़ापे में वह कथा दूसरे लोगों के पास बतलाता है सो अपने स्मरण के दोष के कारण सच्चा वृत्तान्त बिगाड़ डालता है। इस रीति से प्रथम काल का वृत्तान्त जो निरे परम्परा से आता है कहने वालों की न्यून स्मृति के हेतु मिथ्या बातों के सङ्ग मिल जाता है॥

फिर एक और कारण यह है कि कथा के कहनेवाले पूर्व काल का वृत्तान्त करने में राजाओं के सद्गुण का बढ़ाव के सङ्ग बखान करते हैं सदा से यह रीति भारतखण्ड में चली आई है कि भाट लोग प्राचीन राजाओं का चरित्र सभाओं में वर्णन करते थे। अपने बड़ों का यश इस रीति से सुन राजा लोग बड़े प्रसन्न होते हैं और बखान करनेहारे की प्रतिष्ठा करते हैं॥

फिर यह भी है कि अद्भुत कथा के सुनने से सामान्य लोगों का मन अति आनन्दित होता है इस कारण राजओं को प्रसन्न और सामान्य लोगों का मन मोहित करने की इच्छा से भाट और कवि पूर्व काल के वृत्तान्त में अद्भुत और अयथार्थ कथाएं मिला लेते थे। अन्त में ऐसी कथाओं की जो भाट लोगों ने पूर्व काल में परम्परा से पाय सुनाई थीं पण्डितों ने एक संहिता किई। पुराण नाम का अर्थ भी यही होगा अर्थात् ऐसी कथाओं की जो ग्रन्थ बनने के काल में पुराणी होगई थी एक संहिता॥

वेदविद्वान् का वचन॥

इसके अनुसार विष्णु पुराण में लिखा है॥

आख्यानैश्चाप्युपाख्यानैर्गाथाभिः कल्पशुद्धिभिः
पुराणसंहितां चक्रे पुराणार्थविशारदः इति॥

अर्थात् व्यास जो पुराणों के अर्थ में प्रवीण था उसने इतिहास कहानियों और प्रबन्ध और कल्पशुद्धियों से पुराण की संहिता बनाई॥

सत्यार्थी का वचन॥

इस में तो उन ग्रन्थों की जो पुराण कहलाते हैं एक संहिता व्यास की बनाई हुई वर्णन होती है परन्तु पुराणों की कोई ऐसी संहिता आज कल कहीं नहीं मिलती है इस कारण उनका प्रथम स्वरूप कोई नहीं जान सक्ता है। और यद्यपि उनका प्रथम स्वरूप निश्चय करके उपस्थित भी होता तथापि वह वृत्तान्त जो ऐसे अस्पष्ट और अयथार्थ रूप से बन गया सो यथार्थ और प्रमाणिक और बिश्वास योग्य क्योंकर हो सक्ता॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

इस में सन्देह नहीं है कि पुराणों का वृत्तान्त पहिले से कुछ अन्तर होगया है आगे मैं यह बात जानता था परन्तु क्या आप इसका कोई कारण जानते हैं अथवा यह अन्तर किस रीति से हुआ सो भी बतला सक्ते हैं ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

बहुत सम्भव है कि जिस प्रकार से नये २ मत भारतखण्ड में उपजे उस प्रकार से पुराणों के वृत्तान्त में भी अन्तर होगया। आज कल पद्म और मत्स्य पुराणों में सात्विक आदि भेद से सब पुराणों के तीन बिभाग किये गये हैं। इन में से वे जो सात्विक कहलाते हैं सो विशेष करके विष्णु की महिमा बखान करते हैं। दूसरे वर्ग में जो तामस कहलाता है महादेव की विशेष प्रशंसा है। और जो २ पुराण राजस कहाते हैं उन में बालकृष्ण अथवा देवी की स्तुति होती है। कितनों में वर्णन है कि विष्णु परमात्मा है कितनों में महादेव। परन्तु यह मत कि इन देवों में से कोई एक परमात्मा आप ही है सो प्रथम भारतखण्ड में नहीं था क्रम २ से उत्पन्न हुआ क्योंकि जब अग्नि आदि वैदिक देवताओं की महिमा घट गई थी तब ही ब्रह्मा विष्णु महेश की प्रतिष्ठा बढ़ने लगी। किस प्रकार से साधारण लोग इन देवताओं को प्रधान मानने लगे सो अब भली भांति निश्चय नहीं हो सक्ता है। उपनिषदों में तो संसार का एकादि कारण ब्रह्म आदि नामों से बतलाया जाता है परन्तु पण्डित लोग ऐसा मानते थे कि यद्यपि ब्रह्म सचमुच एकही है तथापि सृष्ट आदि कर्मों के लिये तीन रूप धारण करता है इस प्रकार से ब्रह्मा विष्णु महेश देवता की पदवी को पहुंचाये गये। और

शास्त्रों में ये तीनों इस रूप से प्रसिद्ध हैं कि ब्रह्मा सिरजनेहारा और विष्णु पालनेहारा और महेश संहार करनेहारा है। रामायण में भी इसी प्रकार से इन तीनों की महिमा बखानी है और महाभारत में इसके समान उनकी पूजा किई जाती है परन्तु ब्रह्मा का भजन क्रम २ से घट गया और उसके समान विष्णु और रुद्र की पूजा साधारण लोगों में बहुत बढ़ गई भजन और मत के ऐसे अन्तर होने के कारण पुराणों में भी वही अन्तर पड़ गया होगा॥

वेदविद्वान् का वचन॥

इस बिषय का जो वर्णन आप करते हैं सो सत्य होगा परन्तु यदि इसका कोई प्रमाण मिल सक्ता तो मन और भी सन्तुष्ट हो जाता॥

सत्यार्थी का वचन॥

पण्डितजी इस बात को वे जो पुराणों की विद्या में निपुण हैं जिस भांति से सिद्ध करते हैं उसका सारा बिस्तार मेरे मुख से सुनिये। कितने बिदेशी विद्यावान् जो महाभारत का सम्पूर्ण वृत्तान्त भले प्रकार से जानते हैं बिचार कर कहते हैं कि उसके कितने भाग नवीन हैं क्योंकि उस में जो साधारण शिक्षा मिलती है इसके बिरुद्ध एक दूसरे प्रकार की शिक्षा कहीं २ पाई जाती है इस्से वे जो तत्वज्ञान के विवेकी हैं यह अनुमान करते कि ये अलग २ भाग जिनका अभिप्राय बिरुद्ध है सो भिन्न २ काल में अर्थात् एक दूसरे के पीछे लिखे गये और वह भाग जिस में प्राचीन मत देख पड़ता है सो प्राचीन और वह भाग जिस में नवीन मत पाया जाता है सो नवीन ठहरता है। इस रीति से बिचारी लोगों ने निर्णय किया है कि जिन भागों में परमात्मा के नाम

से कृष्ण का बखान है सो सब के सब नवीन हैं क्योंकि इस मत का कुछ वर्णन महाभारत के किसी और स्थल में देख नहीं पड़ता है और दूसरे प्रकार से भी जाना जाता है कि यह मत औरों से नवीन है इस रीति से प्रसिद्ध भगवद्गीता जिस में परब्रह्म के नाम से कृष्ण का बखान है नवीन जानी जाती है जिस काल पण्डितों ने पहिले महाभारत की संहिता किई उस काल भगवद्गीता बनी नहीं थी परन्तु इसके उपरान्त जब कृष्ण की महिमा संसार में बहुत बढ़ गई थी तब पण्डितों ने गीता को बनाके महाभारत की संहिता में मिला लिया इसके समान कितने पण्डित बिचार करते हैं कि रामायण का वह भाग जिस में विष्णु के अवतार के नाम से राम आदिकों की महिमा है सो भी नवीन है ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

जो यह दशा है तो आपकी समझ में राम और कृष्ण का यथार्थ वृत्तान्त कैसा है ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

इस में सन्देह नहीं है कि अयोध्या देश का स्वामी एक प्राचीन राजा राम नाम बड़ा प्रतापी और जयवन्त था और यह भी प्रसिद्ध है कि मथुरा के राजा कृष्ण ने महाभारत के बड़े युद्ध में पाण्डवों की सहायता किई इन दोनों राजाओं ने अपनी बीरता और गुणों से बड़ा यश पाया परन्तु उनको देवता कर के मानना बुद्धिमान् के योग्य नहीं है। कवि लोगों ने बड़े बढ़ाव के सङ्ग उनके चरित्र का बखान कर क्रम २ से उनकी महिमा संसार में बहुत बढ़ाई फिर जब उनका यथार्थ वृत्तान्त मनुष्य के स्मरण से मिट गया था तब अज्ञान लोग उनको देवता

जानने लगे। जब लों कोई गुणवान् पुरुष इस जगत में रहता है तब लों मनुष्य उसके देवता होने की भावना नहीं कर सक्के हैं क्योंकि वे प्रतिदिन और साक्षात् रीति से देखते हैं कि देवता के समान नहीं बरन मनुष्य के समान कार्य्य किया करता है। परन्तु जब वह जगत से अन्तर्ध्यान हुआ और परलोक की याचा कर गया तब उसके बिषय में निष्प्रमाण और अयथार्थ कथाओं की उत्पत्ति हो सक्ती है। सारे देशों के मनुष्य अपने स्वाभाविक गुण से हर एक वस्तु का जो जगत में बहुत प्राचीन देख पड़ती है बड़ा आदर करते हैं और पूर्वकाल के जिन पुरुषों ने अपने गुणों से संसार में बड़ा यश पाया है उनके पीछे आनेवाले मनुष्य उनकी बड़ी प्रतिष्ठा करते हैं। जिस प्रकार से राम और कृष्ण के बिषय में जो सचमुच देव नहीं हैं उसी प्रकार से औरों के बिषय में भी देवता होने की भावना भारतखण्ड में उत्पन्न हुई क्योंकि पण्डितजी महाभारत के आदि पर्व में लिखा है कि देवताओं का अंश अवतार लेके बहुतेरे शूरों और बीरों के रूप में प्रगट हुए। यदि आप इस वृत्तान्त का निर्णय करना चाहें तो अंश अवतरण नाम पर्व को देखिये। बरन इस प्रकार का बढ़ाव अज्ञानता से उत्पन्न हो सदा से भारतखण्ड में प्रचलित हो रहा है। शास्त्रकर्त्ता यह भी कहते हैं कि प्रसिद्ध शङ्कराचार्य्य शिव का और बड़ा मुनि कपिल बिष्णु का अवतार था॥

वेदविद्वान् का वचन॥

यह तो प्रसिद्ध बात है कि इन दिनों में भी इस देश के निवासी कितने लोगों को जो मर गये मिथ्या रूप से देव की महिमा देते हैं महम्मद के कितने एक मतावलम्बी अनेक स्थानों में पीर नाम से प्रसिद्ध हैं वे जो इस देश में पुण्यात्मा की रीति

बड़ा यश पाते हैं अज्ञान लोग फूल चढ़ाय उनकी पूजा करते हैं और उनकी ऐसी महिमा झूठी कहते हैं कि रोगियों के चंगा करने की आदि शक्ति उन मृतकों में रहती है। इस प्रकार से मनुष्यों के देव करने की यह व्यर्थ रीति पहिले से आज लों भारतखण्ड में देख पड़ती है परन्तु इस रीति की उत्पत्ति का कोई सत्य मूल होगा और मैं ने ऐसा समझा है कि जो औरों के बिषय में साक्षात् मिथ्या है सो राम और कृष्ण के बिषय में सत्य होगा इस कारण मैं पूछता हूं कि आप किस प्रमाण से जानते हैं कि आरम्भ में राम और कृष्ण का यथार्थ वृत्तान्त देवता का सा नहीं था ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

एक बात तो यह है कि उनके देवता होने का वृत्तान्त जो शास्त्रों में मिलता है सो परीक्षा करने से यथार्थ और प्रमाणिक नहीं ठहरता है परन्तु इस समय इसकी चर्चा भली भांति नहीं कर सक्के पीछे सम्पूर्ण रूप से बिचार करेंगे कि यथार्थ और प्रमाणिक वृत्तान्त कैसा है और किन लक्षणों से जाना जाता है पर इसको छोड़ अब इसके सम्बन्ध में दो एक और बात कहूंगा। आप सुनिये ॥

बिक्रमादित्य के सन से ५०० वर्ष पहिले बौद्धमत की उत्पत्ति हुई उस मत के सब से प्राचीन शास्त्रों में अनेक देवताओं का वृत्तान्त मिलता है जिनकी पूजा वेदमतावलम्बी उस काल करते थे। हरि नारायण ब्रह्म बरुण शङ्कर शिव कुबेर वासव शक्र आदि देवताओं के नाम से बखान होते हैं। परन्तु बौद्धों के किसी प्राचीन सूत्र में जिसकी परीक्षा हुई कृष्ण का नाम नहीं आता है यदि कृष्ण की पूजा उस काल में साधारण रूप

से प्रचलित होती तो क्या और देवताओं के समान बौद्धों के सूत्रों में उसका वर्णन न होता । इस रीति से अनुभव सिद्ध है कि जिस काल वे सूत्र रचे गये उस काल कृष्ण के देवता होने की भावना सामान्य लोगों में प्रचलित नहीं थी ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

कदाचित् बौद्धों के किसी और सूत्र में जिसकी परीक्षा अब लों नहीं हुई कृष्ण का वर्णन होवे ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

यदि आप ऐसा समझें तो एक ऐसा सूत्र दिखाइये परन्तु केवल इतना नहीं क्योंकि छन्दोग्य उपनिषद् के कर्त्ता एक प्राचीन पण्डित ने कृष्ण का यह वृत्तान्त किया है कि देवकी के पुत्रने घोर से शिक्षा पाई । जैसे छन्दोग्य उपनिषद् में लिखा है ॥

तद्धैतद् घोर आङ्गिरसः कृष्णाय देवकीपुत्रायोक्त्वोवाच इत्यादि ॥

अर्थात् अङ्गिर का पुत्र घोर नामक ऋषि देवकी के पुत्र को यह कहके बोला इस स्थल में कृष्ण का देवता की रीति वर्णन नहीं होता है और महिमा का कोई पद कहा नहीं जाता है। इस्से अनुमान करते हैं कि जिस काल में उपनिषद् बनाये गये उस काल देवकी का पुत्र प्रसिद्ध तो था परन्तु जब आदर प्रकाशक कोई शब्द उपस्थित नहीं है तो उस्से सिद्ध है कि उसके देवता होने की भावना उस काल भारतखण्ड में प्रचलित नहीं थी। अब आप बिचार कीजिये कि महाभारत आदि इति-हासों और पुराणों में कृष्ण का वृत्तान्त नाना प्रकार का है और उसकी महिमा क्रम २ से बढ़ती जाती है जहां उसके युद्ध आदि कर्म्मों का वर्णन है वहां वह अन्य मनुष्यों की रीति कार्य्य करता है अपनी रक्षा के लिये अथवा शत्रुओं के नाश के हेतु बहुधा

दैव्यशक्ति प्रगट नहीं करता है फिर बन पर्व में लिखा है कि उसने सहस्रों बरस लों अनेक तीर्थों में अति कठिन तप किये। ऐसा वृत्तान्त देवता का सा नहीं है मनुष्य का सा है फिर उसी महाभारत के कितने स्थलों में कहा है कि केशव ऋषि नारायण ही है यों कृष्ण आप ही कहता है ॥

त्वं चैवाहं च कौन्तेय नरनारायणौ स्मृताविति ॥

अर्थात् हे कुन्ती के बेटे तू नर और मैं नारायण हूं फिर दान धर्म में कहा है कि कृष्ण ने शिव का पुजारी हो स्त्री समेत उसको प्रसन्न कर उन से अनेक बर पाये। आप बतलाइये कि इसके बिरुद्ध कृष्ण का हरि के एक अंश का अवतार होना कैसा वर्णन होता है ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

महाभारत के आदि पर्व में लिखा है कि हरि के एक काले केश से कृष्ण उत्पन्न हुआ जैसा ॥

व्यास उवाच ॥

तैरेवसार्द्धन्तु ततः स देवोजगाम नारायणमप्रमेयं
अनन्तमव्यक्तमजं पुराणं सनातनं विश्वमनन्तरूपं ॥ ६३०६ ॥

सचापितद्व्यधात्सर्वमेव ततः सर्वे संबभूवुर्द्धरण्यां
सचापि केशौ हरिरुद्बबर्ह शुक्लमेकमपरंचापि कृष्णम् ॥ ७३०७ ॥

तौ चापि केशौ निविशेतां यदूनां कुले स्त्रियौ देवकीं रोहिणीं च

तयोरेकोबलदेवोबभूव योऽसौ श्वेतस्तस्य देवस्य केशः
कृष्णोद्वितीयः केशवः सम्बभूव केशोयोसौवर्णतः कृष्ण उक्तः
॥ ६३०८ ॥

अर्थात् तिसके पीछे वह देव अर्थात् ब्रह्मा उन्हीं देवों के साथ नारायण के पास जो किसी से नहीं जाना जाता जिसका

अन्त नहीं और जो किसी पर प्रगट नहीं और जिसकी उत्पत्ति नहीं और जो पुरातन और सदा एक रूप बना रहता और सर्वस्वरूप जिसके रूप अनन्त हैं गया। और उसने भी उनका वह सब काम किया तब सब देव पृथ्वी में उत्पन्न हुए और उस हरि ने भी दो केश निकाले एक श्वेत और एक काला। उन केशों ने यदुओं के वंश में देवकी और रोहिणी नाम स्त्रियों में प्रवेश किया उन में से जो उस देव का श्वेत केश था उस से बलदेव हुआ और दूसरा केश जो वर्ण में काला था उस से कृष्णवर्णी केशव हुआ॥

सत्यार्थी का वचन॥

इसके अनुसार विष्णु पुराण में भी पाराशर कहता है कि कृष्ण की उत्पत्ति एक केश से हुई। जैसा॥

एवं संस्तूयमानस्तु भगवान् परमेश्वर:
उज्जहारात्मन: केशौ सितकृष्णौ महामुने
उवाच च सुरानेतौ मत्केशौ वसुधातले
अवतीर्य्य भुवोभारक्लेशहानिं करिष्यत:
सुराश्च सकला: स्वांशैरवतीर्य्य महीतले
कुर्वन्तु युद्धमुन्मत्तै: पूर्वोत्पन्नैर्महासुरै:
तत: क्षयमशेषास्ते दैतेया धरणीतले
प्रयास्यन्ति न सन्देहोमद्दृक्पातविचूर्णिता:
वसुदेवस्य या पत्नी देवकी देवतोपमा
तस्यायमष्टमोगर्भोमत्केशोभविता सुरा:
अवतीर्य्य च तत्रायं कंसं घातयिता भुवि
कालनेमिसमद्भूतमित्युक्त्वाऽन्तर्दधे हरिरिति॥

अर्थात् हे महामुनि जब देवताओं ने इस भांति भगवान् परमेश्वर की स्तुति किई तब उसने अपने दो केश एक श्वेत

और एक काला उखाड़े। और देवों से कहा कि ये मेरे केश भूमण्डल में अवतार लेके भूमि का भार और पीड़ा दूर करेंगे। और सब देव अपने २ अंश से पृथ्वी में उतरके बड़े २ असुरों से जो पहिले उत्पन्न हुए और उन्मत्त हैं युद्ध करें। तब वे सारे दैत्य मेरी दृष्टि के पड़ने से चूरण होके भूमि पर नाश होंगे इस में कुछ सन्देह नहीं है। हे देवो। देवकी नाम वसुदेव की स्त्री जो देवतासी है उसका आठवां गर्भ यही मेरा केश होगा। और वह पृथ्वी में अवतार लेके कंस को जो कालनेमि से उत्पन्न है मार डालेगा ऐसा कहके हरि गुप्त हो गया॥

इन दो स्थलों में वर्णन है कि विष्णु के एक केशमात्र से कृष्ण उत्पन्न हुआ परन्तु गीता में इस्से आगे बढ़के क्या उसकी बहुत अधिक महिमा नहीं होती है॥

वेदविद्वान् का वचन॥

हां भगवद्गीता में अर्जुन कहता है कि कृष्ण परमात्मा है जैसा॥

परं ब्रह्म परं धाम पवित्रं परमं भवान्
पुरुषं शाश्वतं दिव्यमादिदेवमजं विभुं॥
आहुस्त्वामृषयः सर्वे देवर्षिर्नारदस्तथा
असितोदेवलोव्यासः स्वयं चैव ब्रवीषि मे इति॥

अर्थात् तू परब्रह्म और बड़ा तेजोरूप और अति पवित्र है तुझको सब ऋषि जैसे देव ऋषि नारद असित देवल और व्यास कहते हैं कि तू शाश्वत पुरुष दिव्य आदिदेव और व्यापक है और किसी से उत्पन्न नहीं बरन तू भी आप ऐसा कहता है॥

सत्यार्थी का वचन ॥

अब आप ध्यान कीजिये कि जिस प्रकार महाभारत में कृष्ण का भिन्न २ वृत्तान्त देख पड़ता है उसी प्रकार अन्य पुराणों में भिन्न २ मत दृष्ट आते हैं। ब्रह्मवैवर्त्त में बालकृष्ण और राधा का नवीन भजन बिशेष करके किया जाता है जिसका चिन्ह विष्णु आदि पुराणों में कहीं नहीं देख पड़ता है। इस रीति से जब शास्त्रों की परीक्षा होती है तो सिद्ध है कि कृष्ण के बिषय में नाना प्रकार के भिन्न २ मत क्रम २ से बदलते गये हैं। और जब भारतखण्ड में कोई नया मत उत्पन्न हो प्रबल हुआ तब उस नये मत के पक्षपातियों ने उसके स्थापन के लिये एक नया शास्त्र भी बनाया ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

उस वर्णन से जो आपने कृष्ण के बिषय में किया है मेरी समझ में ऐसी ठीक बिरुद्धता सिद्ध नहीं होती है क्योंकि ईश्वर के किसी अवतार में ईश्वर और मनुष्य दोनों का गुण दृष्ट आना कुछ बुद्धि के बिरुद्ध नहीं है। इस कारण मैं जानता हूं कि आपका वर्णन सिद्ध करने के लिये कुछ और प्रमाण चाहिये ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

आपका कहना ठीक है और मैं ने केवल इतना कहा है कि कृष्ण का जो वृत्तान्त शास्त्रों मे मिलता है अनुमान की रीति से उसका वही अर्थ जो मैं ने बतलाया सम्भव और बुद्धि के अनुसार देख पड़ता है। क्योंकि आप बिचार कीजिये कि और प्रकरणों में भी समस्त पुराणों की यही रीति प्रत्यक्ष है शैव

और वैष्णव पुराणों में इसी प्रकार की परस्पर बिरुद्धता और द्वेष देख पड़ता है और एक २ अपने २ इष्ट देवता का बखान करता है। शास्त्रों में जो दक्ष के यज्ञ नाश होने की कथा है उस्से जाना जाता है कि पूर्वकाल में भी शैव लोग वैष्णवों से द्वेष करते थे। शिव अथवा विष्णु का पक्ष लेके उनके पूजकों ने अपने २ इष्ट देवता की प्रशंसा के लिये पुराण बनाये। कितने पुराणों में विष्णु की स्तुति है और शिव के पूजकों की निन्दा। पद्म पुराण का उत्तर खण्ड जो आप देखिये तो उस में विष्णु के भजन की बड़ी प्रशंसा है। उस खण्ड में ऐसा लिखा है कि महादेव ने पार्वती को विष्णुपूजा और विष्णुभक्ति का सम्पूर्ण वृत्तान्त बिस्तार के साथ किया। और जब रुद्र वर्णन कर चुका तब उन दोनों ने विष्णु की पूजा किई। फिर उसी पुराण में यह भी लिखा है कि एक समय ऋषियों की सभा में भृगु ने कहा कि तीन देवों में केवल हरि प्रशंसा के योग्य है। जैसे पद्म पुराण के उत्तर खण्ड में अन्त के अध्याय में लिखा है॥

भृगुरुवाच ॥

रजस्तमोगुणोद्रिक्तौ विधीशानौ सुरोत्तमौ
शप्तौ मया न पूज्यौ तौ विप्राणामृषिसत्तमाः ॥
शुद्धसत्वमयोबिष्णुः कल्याणगुणसागरः
नारायणः परं ब्रह्म बिप्राणां दैवतं हरिरिति ॥

अर्थात् ब्रह्मा और रुद्र जो सब देवों में श्रेष्ठ हैं उन में रजोगुण और तमोगुण अधिक है हे श्रेष्ठ ऋषियो मैं ने उनको श्राप दिया है वे ब्राह्मणों से पूजा पाने के योग्य नहीं हैं। परन्तु विष्णु शुद्ध और सद्गुणी है जो मङ्गल गुणों का समुद्र

है और वह नारायण परब्रह्म रूपी है इस कारण हरि ही ब्राह्मणों का दैवत है ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

इसके समान भागवत में ब्रह्मा प्रजापति आप ऐसे ही वचनों से विष्णु की स्तुति करता है। जैसे दूसरे स्कन्ध के छठे अध्याय में ब्रह्मा कहता है ॥

ब्रह्मोवाच ॥

नाहं न यूयं यट्टतां गतिं विदुर्न वामदेव: किमुतापरे सुरा: तन्मायया मोहितबुद्धयस्त्विदं बिनिर्मितं चात्मसमं बिचक्ष्महे ॥ ३६ ॥ यस्यावतारकर्म्माणि गायन्ति ह्यस्मदादय: न यं विदन्ति तत्वेन तस्मै भगवते नम: ॥ ३० ॥ इत्यादिना

अर्थात् जिसकी सत्य गति को न मैं न महादेव न तुम लोग जानते फिर और देवों की कौनसी गिनती है क्योंकि उस की माया से हम लोगों की बुद्धि में मोह पड़ा है इस कारण हम केवल यह जगत जो उसने अपने सदृश बनाया देखते हैं। जिसके अवतार और कर्म्मों को हम ऐसे गाते पर जिसको ठीक २ नहीं जानते उस भगवान् को नमस्कार ॥

फिर पद्म पुराण के उत्तर खण्ड में ब्रह्मा कहता है ॥

ब्यापकोऽयं सदा विष्णु: परमात्मा सनातन :
अनादिनिधन : श्रीमान् भूतात्मा भूतभावन : ॥
यस्मादहं हि सञ्जात: सोयं विष्णु: सदावतु
सोऽयं कालस्य कालोवै सोऽयं मम तु पूर्वज : ॥

अर्थात् यह विष्णु सदा व्यापक है और परमात्मा सदा से एक रूप बना है जिसका आदि और अन्त नहीं और ऐश्वर्य्य-

मान् सब प्राणियों का आत्मा और उनका सिरजनहार है। जिस्से मैं उत्पन्न हुआ सो यह विष्णु सारे समय रक्षा करे सो यह मृत्यु का भी मृत्यु है सो यह मेरा पुरनियां है ॥

फिर यह भी कहा है ॥

स पिता जनिताऽस्माकं कीर्त्यते मधुसूदनः

अर्थात् वह मधुसूदन हम लोगों का पिता और जन्म देने हारा कहाता है ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

अब इसके बिरुद्ध में आप बिचार कीजिये कि लिङ्ग कूर्म आदि शैव पुराणों में विष्णु की कैसी निन्दा और शिव की कैसी स्तुति है। लिङ्ग पुराण में लिखा है कि एक दिन ब्रह्मा और विष्णु अपना २ श्रेष्ठता के लिये झगड़ा करते थे तब एक अग्नि रूप महालिङ्ग प्रकट हुआ उस्से वे लज्जित हो और उसका बड़ा तेज देख दोनों ब्रह्मा और विष्णु ने शिव की पूजा किई। जैसे लिङ्ग पुराण के १० वें अध्याय में लिखा है ॥

आवयोस्त्वभवद्युद्धं सुघोरं रोमहर्षणं
प्रलयार्णवमध्ये तु रजसा बद्धवैरयोः ॥
एतस्मिन्नन्तरे लिङ्गमभवच्चावयोः पुरः
विवादशमनार्थञ्च प्रबोधार्थञ्च भास्वरं ॥
ज्वालामालासहस्राढ्यं कालानलशतोपमं
क्षयवृद्धिविनिर्मुक्तमादिमध्यान्तवर्ज्जितं ॥
अनौपम्यमनिर्देश्यमव्यक्तं विश्वसम्भवं
तस्य ज्वालासहस्रेण मोहितोभगवान् हरिः ॥
मोहितं प्राह मामत्र परीक्षावोग्निसम्भवं
अधो गमिष्याम्यनलस्तम्भस्यानुपमस्य च ॥

भवानूर्द्धं प्रयत्नेन गन्तुमर्हति सत्वरं
एवं व्याहृत्य विश्वात्मा स्वरूपमकरोत्तदा ॥
वाराहमहमप्येवं हंसत्वं प्राप्तवान् सुरा:
एवं वर्षसहस्रन्तु त्वरन्विष्णुरधोगतः ॥
नापश्यदल्पमप्यस्य मूलं लिङ्गस्य शूकर:
तावत्कालं गतोऽत्यूर्द्धमहमप्यरिसूदनाः ॥
सत्वरं सर्वयत्नेन तस्यान्तं ज्ञातुमिच्छया
श्रान्तोन दृष्ट्वा तस्यान्तमहङ्कालादधोगत: ॥
तथैव भगवान् विष्णुः श्रान्तस्त्रस्तलोचन:
सर्व्वदेवभवस्तूर्णमुत्थितस्तमहावपु: ॥
समागतोमया सार्द्धं प्रणिपत्य भयान्मुहु:
मायया मोहितश्शम्भोस्तस्थौ सम्विग्नमानस: ॥
पृष्ठतः पार्श्वतश्चैव चाग्रतः परमेश्वरं
प्रणिपत्य मया सार्द्धं संस्मार किमिदं त्विति ॥
तदा समभवत्तत्र सनादं शब्दलक्षणं
ओं ओमिति सुरश्रेष्ठाः सुव्यक्तं प्लुतलक्षणं ॥
किमिदं त्विति सञ्चिन्त्य मया तिष्ठन्महास्वनं
लिङ्गस्य दक्षिणे भागे तदाऽपश्यत् सनातनमित्यादि ॥

अर्थात् उस प्रलय काल के समुद्र में हम दोनों का बड़ा भयानक युद्ध हुआ जिसके सुनने से रोम खड़े होते क्योंकि हम दोनों में रजोगुण के कारण से आपस में बैर था। उस समय हमारे झगड़े के मिटाने और समझाने के लिये हम दोनों के आगे एक तेजोमय लिङ्ग उत्पन्न हुआ। जिसके चारों ओर सहस्रों ज्वालाओं की माला थीं और जो प्रलय काल के सैकड़ों अग्नि के सदृश था जिसका क्षय और वृद्धि नहीं और आदि मध्य अन्त नहीं। और जिसको उपमा नहीं दे सक्ते हैं और जिसका वर्णन

नहीं कर सक्ते हैं क्योंकि वह अस्पष्ट और सब का कारण था उसकी सहस्रों ज्वाला देख भगवान् हरि मोह में पड़ा। और मैं भी मोहित हुआ तब मुझे हरि ने कहा कि हम दोनों देखें कि यहां कहां से अग्नि आई मैं इस अनूपम स्तम्भ के नीचे जाऊंगा और आपको बेग प्रयत्न कर ऊपर जाना चाहिये। हे देवो। तब सर्वात्मा हरि ने इस भांति कहके वाराह रूप लिया और मैं ने भी उसी प्रकार हंस का रूप धारण किया। इस प्रकार सहस्र बर्ष पर्य्यन्त बड़े वेग से विष्णु नीचे गया परन्तु उस वाराह रूपी ने उस लिङ्ग का मूल कुछ भी न देखा। हे शत्रुओं के नाश करनेहारो। मैं भी उतने काल लों वेग से बड़ी दूर लों ऊपर गया और कोई प्रयत्न न छोड़ा इस इच्छा से कि उसका अन्त जानूं परन्तु मैं थक गया उसका अन्त न देखा। तब कुछ काल बीते नीचे लौट आया उसी भांति जब भगवान् विष्णु जिस्से सब देवता उत्पन्न हुए और महाशरीर धारी था थक गया और उसके नयन पीड़ित हुए तब त्वरित ऊपर आया। और मेरे साथ आय भय खाय बारम्बार नमस्कार करता महादेव की माया से मोहित हो मन में घबराता खड़ा रहा। और मेरे सङ्ग आगे पीछे दहिने बायें परमेश्वर को नमस्कार करता चिन्ता करने लगा कि यह क्या है। हे उत्तम देवो। तब वहां ओं ऐसा एक स्पष्ट शब्द बड़े नाद से हुआ जिस में प्लुत अर्थात् लम्बी ध्वनि थी। और जब वह मेरे साथ खड़ा होके यह चिन्ता कर रहा था कि यह क्या है तो लिङ्ग की दहिनी ओर उस समय सनातन को देखा॥

फिर यह भी कहा है॥

> पञ्चमनन्तं तथा लब्ध्वा जजाप भगवान् हरिः
> अथ दृष्ट्वा कालवर्णं ऋग्यजुःसामलक्षणं॥

ईशानमीशमुकुटं पुरुषाख्यं पुरातनं
अघोरहृदयं हृद्यं वामगुह्यं सदाशिवं ॥

सद्यपादं महादेवं महाभोगीन्द्रभूषणं
बिश्वतः पादवदनं बिश्वतोचिकरं हरं ॥

ब्रह्मणोधिपतिं सर्गस्थितिसंहारकारणं
तुष्टाव पुनरिष्टाभिर्वाग्भिर्वरदनमीश्वरमिति ॥

अर्थात् भगवान् हरि ने पांच मन्त्रों का प्राय जप किया सब मुख रूपी ईश्वर को देख उसने अच्छी वाणी से स्तुति किई। जो चन्द्र के समान और ऋक् यजु साम रूपी और सब का ईश्वर है। और ईश्वर मन्त्र जिसका मुकुट पुरुष जिसका नाम है और जो पुरातन है अघोर मन्त्र जिसका हृदय जो सब का प्रिय है बाम मन्त्र जिसका गुह्य जो सदा कल्याण करता है। सद्य मन्त्र जिसका पाद जो सब देवों में बड़ा है बड़े २ सर्प जिसके भूषण हैं जिसके सब ओर पाद मुंह आंख और हाथ हैं जो दुःख का हरनेहारा जो ब्रह्मा का भी अधिपति है और उत्पत्ति स्थिति और संहार का कारण है ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

कुछ सन्देह नहीं है कि कितने पुराण बिशेष करके विष्णु की महिमा बखान करते हैं और कितने महादेव की प्रशंसा करते हैं और पहिले दृष्टि से यह तो एक प्रकार की बिरुद्धता देख पड़ती है। इसका जो कारण पण्डित लोग वर्णन करते हैं मैं पीछे कहूंगा परन्तु पहिले जितना वृत्तान्त आप करना चाहते हैं मैं सब का सब सुन लूंगा ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

पण्डितजी एक और बात यह है कि पुराणों के कर्त्ता अपने २ इष्ट देवता का पक्ष धरके ऐसी ही विरुद्धता के सङ्ग उनके लोकों का भी बखान करते हैं। पद्म पुराण का कर्त्ता जो वैष्णव था कहता है कि विष्णु का लोक वैकुण्ठ समस्त और लोकों से श्रेष्ठ है। फिर ब्रह्मवैवर्त्त में जो कृष्ण के पक्ष पर है कहा है कि सब से श्रेष्ठ लोक गोलोक है। इनके विरुद्ध शिव और कूर्म पुराण जो शैव हैं कहते हैं कि रुद्र का लोक सब से श्रेष्ठ है। परन्तु शैव और वैष्णव पुराणों में जो विरुद्धता और द्वेष है प्रकट करने के लिये और कुछ कहना क्या प्रयोजन है सारे संसार में यह बात प्रसिद्ध है ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

क्या आपने नहीं कहा था कि कितने पुराण नवीन हैं आप इस बात को किस प्रमाण से सिद्ध करते हैं ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

पुराणों के बहुतेरे खण्डों में वाराणसी अर्थात् काशी आदि तीर्थों की महिमा बखानी है। अब वे जो यथार्थ वृत्तान्त से सज्ञान हैं जानते हैं कि इन तीर्थों में से कितने नवीन हैं इस कारण पुराणों के वे खण्ड जिन में नवीन तीर्थों की महिमा है सो भी नवीन होंगे। जब से उत्कल देश में जगन्नाथ का प्रसिद्ध मन्दिर बन गया तब से छह सौ वर्ष बीत न गये होंगे इसके बनाने का काल यथार्थ लक्षणों से जाना जाता है। अब ब्रह्म पुराण में जिस में उत्कल देश के तीर्थों की महिमा

बखानी है इसी मन्दिर का वर्णन लिखा है। इस्से यह अनुभव सिद्ध है कि वह पुराण जिस में इस मन्दिर का वर्णन है सो मन्दिर के बनने के पीछे लिखा गया। इसी प्रकार से पद्म पुराण की नवीनता भी सिद्ध है क्योंकि उस में श्रीरंग श्रोर व्यंकट के देव मन्दिरों का वर्णन है। पुराण के वे खण्ड जिन में तीर्थों की प्रशंसा है सम्भव है कि उनकी उत्पत्ति इस प्रकार से हुई होगी अर्थात् सर्वत्र संसार में प्रसिद्ध है कि तीर्थों के पुरोहित श्रोर पंडे अपने अपने पवित्र स्थानों का यश बड़े यत्न से बढ़ाते हैं। जब किसी तीर्थ का यश इस प्रकार से बहुत बढ़ गया था तब उसके माहात्म्य का एक खण्ड किसी पुराण में मिलाते थे। श्रोर ऐसे स्थानों की पवित्रता सिद्ध करने के लिये पण्डित लोगों ने अद्भुत कथाश्रों की कल्पना किई कि उन में किसी २ देवता का दर्शन हुश्रा॥

वेदविद्वान् का वचन॥

जब कि आप भागवत का वृत्तान्त करते थे तब आपने कहा कि कितने पण्डितों की समझ में उसका कर्त्ता व्यास था क्या इस विषय में कुछ सन्देह है अथवा आप उसके बनने का काल किन्हीं लक्षणों से बतला सक्ते हैं॥

सत्यार्थी का वचन॥

भागवत ही की एक कथा से जाना जाता है कि उसके बनने का काल महाभारत के पीछे था। क्योंकि लिखा है कि जब व्यासजी ने वेदों की संहिता करके उन्हें पैल आदिकों को दिई श्रोर इतिहास पुराण सूत के पिता लोमहर्षण को दिये थे तब शूद्र आदिकों के ज्ञान के लिये महाभारत की संहिता किई

परन्तु उससे सन्तुष्ट न हो वह बड़ी व्याकुलता में डूब गया। इस दशा में नारदजी ने स्वर्ग से उतर दर्शन दे उसको समझाया इसके पीछे व्यास ने भागवत को बनाया। देखो भागवत के १ स्कन्ध ४ अध्याय में ॥

इतिभारतमाख्यानं कृपया मुनिना कृतं
एवं प्रवृत्तस्य तदा भूतानां श्रेयसि द्विजाः ॥
सर्वात्मकेनापि यदा नातुष्यद्धृदयं ततः
नातिप्रसीदद्धृदयः सरस्वत्यास्तटे शुचौ
वितर्कयन् विविक्तस्थ इदं प्रोवाच धर्मवित् इति ॥ १० ॥

अर्थात् इस प्रकार से कृपाकर मुनि ने भारतनाम इतिहास बनाया परन्तु हे ब्राह्मणो यद्यपि वह सब प्रकार से प्राणियों के कल्याण करने में ऐसा उद्योग करता था तो भी जब उसके मन में सन्तोष न हुआ तब वह धर्म ज्ञानी जिसका चित्त अति सन्तुष्ट न था सरस्वती के पवित्र तट पर एकान्त में बैठा हुआ बिचार करता हुआ यह कहने लगा ॥

भागवत के इन्हीं वचनों से देख पड़ता है कि उसकी उत्पत्ति पुराणों और महाभारत के पीछे थी फिर भी उसका नाम पुराण की रीति समस्त पुराणों के सूची पत्र में आता है। कितने यहां के पण्डित कहते हैं कि मुग्धबोध व्याकरण के कर्त्ता वोपदेव ने सचमुच भागवत को बनाया। यह तो परम्परा की एक बात है परन्तु उस पर सन्देह करने का कोई यथार्थ कारण देख नहीं पड़ता। वोपदेव का काल देवगिरि के राजा हिमाद्रि का था अर्थात् उसको छह सौ बर्ष बीत गये हैं कदाचित् आप की समझ में यह काल बहुत नवीन देख पड़े परन्तु कितने पुराण इससे भी नवीन हैं। सम्भव है कि पुराणों का काल उन आचार्य्यों के समान होगा जिनके मत बिशेष

करके उन में मिलते हैं अर्थात् शङ्कर को एक सहस्र बर्ष हो गये रामानुज को छह सौ बर्ष माध्वाचार्य्य को पांच सौ बर्ष और बल्लभ को अढाई सौ बर्ष। कोई पुराण जो अब उपस्थित है एक सहस्र बर्ष से प्राचीन नहीं होगा कितने तीन सौ बर्ष के होंगे। परन्तु उन में कितने ऐसे भाग और कथा हैं जो कदाचित् इस्से प्राचीन होंगी पर किसी पुराण का सङ्ग्रहकर्त्ता और ठीक काल और इस प्रकार का वृत्तान्त प्रमाणिक और यथार्थ रीति से कोई नहीं जानता है। इस रीति पर पुराणों की परीक्षा करने से सिद्ध होता है कि एक दूसरे के पीछे बन गया और उनका कोई यथार्थ प्रमाण देख नहीं पड़ता है। एक २ पुराण के कर्त्ता ने जैसा मत जिसको भाया अपनी २ बुद्धि के अनुसार पुराण में अपने मत की प्रशंसा किई। इन में से कितने अपने मत का बड़ा ही पक्ष प्रकट करते हैं और दूसरे मत के शास्त्रों की अपनिन्दा करते हैं। इसके अनुसार ब्रह्मवैवर्त्त का कर्त्ता वेद आदि समस्त शास्त्रों को दूषण देता है। जैसे उसके आदि श्लोक में कहा है॥

भगवन् यत्त्वया पूर्वं ज्ञातं सर्वमभीप्सितं।
सारभूतं पुराणेषु ब्रह्मवैवर्त्तमुत्तमम्॥
पुराणोपपुराणानां वेदानां भ्रमभञ्जनम्
हरिभक्तिप्रदं सर्वं तत्वज्ञानविवर्द्धकं॥
कामिनां कामदं चेदं मुमुक्षूणाञ्च मोक्षदं
भक्तिप्रदं वैष्णवानां कल्पवृक्षस्वरूपकम्॥ इति॥

अर्थात् हे भगवान् जो तू ब्रह्मवैवर्त्त पुराण को पहिले से जानता है सो चाहने के योग्य और पुराणों से उत्तम और सब का सार है। पुराण और उपपुराण और वेदों की भूल मिटानेहारा और हरि की भक्ति देनेहारा और तत्वज्ञान का

बढ़ानेहारा और कामी लोगों के मनोरथ पूर्ण करनेहारा मोक्ष के खोजियों को मोक्ष देनेहारा है और वैष्णवों का मानो कल्पवृक्ष सी भक्ति देवैया है ॥

अब आप बिचार कीजिये कि यदि पुराण ईश्वर वाणी और उनकी शिक्षा सत्य और यथार्थ है तो इस पुराण का यही वचन भी ठीक होगा और इस्से समस्त और शास्त्र खण्डन हो चुके। सो जब मैं कहता हूं कि सम्पूर्ण शास्त्र निष्प्रमाण हैं तो केवल शास्त्र ही की बात कहता हूं परन्तु इसके सङ्ग में कुछ और भी कहता हूं अर्थात् अपने वचन को सिद्ध करने के लिये प्रमाण भी लाता हूं। आप बिचार किजिये कि मेरा प्रमाण यथार्थ है कि नहीं ॥

ग्रन्थकर्त्ता का वचन ॥

तब मैं ने देखा कि सत्यार्थी के इन वचनों से वेदविद्वान् का मुंह तनिक उदास होगया और उसके स्वरूप और डौल से मुझको ज्ञान हुआ कि यद्यपि सत्यार्थी के ऐसे वर्णन से उस का मन कुछ पीड़ित है तथापि सत्य पुरुष हो उसके प्रमाणों का उत्तर दे नहीं सक्ता है। तिस पर भी क्षण भर में ऐसा कहने को प्रसन्न नहीं था कि मेरे शास्त्र सर्वत्र निष्प्रमाण हैं। इस कारण बड़ी दुबधा में पड़के और केवल इतना कहके कि आपकी इच्छा हो तो कल प्रातः काल को हम फिर इस भारी बिषय की चर्चा करेंगे प्रणाम करके बिदा हुआ। और सत्यार्थी और मैं भी अपने २ घर को गये ॥

मतपरीक्षा का चौथा सत्सङ्ग समाप्त हुआ ॥

इति ॥

पांचवां सत्संङ्ग ॥

नये २ मत की उत्पत्ति की चर्चा ॥

ग्रन्थकर्त्ता का वचन ॥

दूसरे दिन बड़े तड़के जाग उठ मैं गङ्गा के तीर पर उसी पीपल के पास चला गया उस समय तो पौ नहीं फटी थी परन्तु पश्चिम की दिशा को चांद अपने अस्त होने पर निकट था उसके स्वप्नरूपी ज्योति से काशी के ग्रह मन्दिर घाट आदि अस्पष्ट रीति पर दिखाई देते थे और उस धूंदलेपन के कारण कितनी बस्तुओं के स्वरूप अपने यथार्थ आकार से भिन्न और अनिश्चित प्रकार से देख पड़ते थे। थोड़े बिलम्ब के पीछे धीरे २ पूर्व दिशा में पौ फटने लगी और दिन का सच्चा उंजियाला उस चांदनी से युद्ध करता और उसको जीतता गया तब मैं ने देखा कि जब लों ये दोनों उंजियाले इस रीति से आपस में सङ्ग्राम कर रहे थे तब लों चारों ओर के पदार्थ आगे से भी अस्पष्ट और अनिश्चित दृष्ट आते थे परन्तु जब कि दिन भली भांति खुल गया था और सूर्य्य के प्रत्यक्ष कारक किरण संसार के ऊपर फैल रहे थे तब एक २ बस्तु का ठीक स्वरूप स्पष्ट देखने में आया और कितने २ पदार्थ जो आगे गुप्त थे प्रत्यक्ष हुए ॥

इस दशा पर ध्यान करते २ मैं ने सोचा कि कदाचित् बेदविद्वान् के मन की दशा इसके तुल्य है क्योंकि सत्यार्थी का विद्या रूपी वृत्तान्त पौ फटने के सत्य उंजियाले के समान है अब लों तो उसका पूरा तेज उदय नहीं हुआ और इस कारण

वेदविद्वान् की दृष्टि में चारों ओर के समस्त बिषय अनिश्चित और सन्देही देख पड़ते हैं परन्तु आसरा है कि ईश्वर की सहायता से सत्य पुरुष की नाईं धीरजवान् हो और धूंदलेपन का कष्ट सह सच्चे दिन के जीवनदायक उंजियाले की बाट जोहता रहेगा तो कितनी बातें जो अब उसकी समझ में नहीं आती हैं भली भांति खुल जायंगी और तत्वज्ञान प्राप्त होगा। इतने में वही वेदविद्वान् और सत्यार्थी दोनों आ पहुंचे और आगे के समान आपस में सम्वाद करने लगे॥

वेदविद्वान् का वचन॥

वेद आदि शास्त्रों का जो वृत्तान्त आपने किया है मैं ने बड़े ध्यान के साथ सब का सब सुन लिया है। जो मैं ऐसा कहता कि आपके सम्पूर्ण वर्णन से मैं आनन्दित हूं तो सच नहीं कहता क्योंकि अपने बिषय में यह ज्ञान पाना कि अब लों मैं भूल में पड़ा रहा हूं सो किसी को भला नहीं लगता है। फिर जो मैं ऐसा भी कहता कि आपके सारे प्रमाण मेरी समझ में यथार्थ और सिद्ध हैं तब भी ठीक नहीं कहता क्योंकि कितनों को अभी ग्रहण नहीं कर सक्ता हूं और कितनों का अर्थ भली भांति नहीं समझता हूं। यद्यपि मैं उनका उत्तर नहीं देता तथापि आप न जानिये कि मैं दे नहीं सक्ता क्योंकि पहिले आपका सारा कहना सुनने चाहता हूं परन्तु इस समय आप से एक बात पूछता हूं सो यह है आपने बहुत ऐसा वर्णन किया है कि शास्त्र और बिशेष करके पुराण किसी नये मत के उत्पन्न होने के पीछे और उसके कारण भी बन गये। परन्तु मैं ने ऐसा समझा था कि मत तो शास्त्र के कारण से बन जाता है न कि शास्त्र मत के कारण से॥

सत्यार्थी का वचन ॥

आपकी समझ में तो ऐसा चाहिये परन्तु आप उस दशा पर ध्यान कीजिये जो आज कल भारतखण्ड में फैल रही है। ऐसा देख पड़ता है कि अनेक मत जो शास्त्रों से सिद्ध नहीं होते परन्तु सामान्य लोगों को मन भावने लगते हैं भारतखण्ड में प्रचलित हैं। उनकी सङ्ख्या यहां लों अनगिणित है कि इसके विषय में एक दृष्टान्त प्रसिद्ध है अर्थात् अट्ठासी सहस्र ऋषियों ने अट्ठासी सहस्र मत स्थापन किये हैं। आप देखिये कि इस में नहीं कहा है कि मत शास्त्र से स्थापन हुआ परन्तु ऋषि से और एक २ मत के पक्षवादी अपने २ मत के स्थापन कर्त्ता को एक ऋषि जानते हैं परन्तु प्रसिद्ध बात है कि उन में से कितने मनुष्य शूद्र थे जो शास्त्रों से अनजान थे। निस्सन्देह उन्हों ने अपने नये २ मत को शास्त्रों के अनुसार नहीं परन्तु अपनी बुद्धि मात्र के समान बनाया। यदि आप इसका सम्पूर्ण समाचार जानने चाहते हैं तो कितनी एक पुस्तकें हैं जिन में इसका वृत्तान्त विस्तार के साथ लिखा है॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

वे कौनसी पुस्तकें हैं जिनका वर्णन आप करते हैं॥

सत्यार्थी का वचन ॥

एक तो शङ्करदिग्विजय नाम है जिसको शङ्कराचार्य्य के एक शिष्य आनन्दगिरि ने साढ़े आठ सौ बर्ष बीते लिखा था उस में उन दिनों के भिन्न २ मतों का सम्पूर्ण वृत्तान्त है। दूसरा प्रसिद्ध माध्वाचार्य्य का लिखा हुआ सर्वदर्शनसङ्ग्रह नाम है

उसको लिखे हुए कोई पांच सौ वर्ष बीत गये हैं। फिर एक तीन सौ वर्ष का भक्तमाला नाम नाभाजी का लिखा और उसकी टीका डेढ़ सौ वर्ष की कृष्णदास ने लिखी है। फिर पचास वर्ष हुए कि दो मनुष्य अर्थात् सीतलसिंह और मथुरानाथ काशी निवासियों ने अपने दिनों के भिन्न २ मतों का वृत्तान्त फ़ारसी भाषा में लिखा है। इन पुस्तकों में भिन्न २ कालों के नाना प्रकार के मत जो साधारण शास्त्रों से भेद परन्तु एक २ अपना निज शास्त्र रखता है और इस देश में स्थापन हुए वर्णन होते हैं। इन में से कितने मिट गये और कितने आज लों भी प्रचलित हैं॥

वेदविद्वान् का वचन॥

इस में सन्देह नहीं है कि बड़े २ आचार्य्य जैसे शङ्कर चैतन्य बल्लभ रामानुज रामानन्दी आदिकों ने शास्त्रों का अर्थ नई २ रीति से खोलके इस देश में नये २ पंथ चलाये हैं परन्तु इस में शास्त्रों से क्या बिरुद्धता सिद्ध हो सक्ती है॥

सत्यार्थी का वचन॥

ये नये २ पंथ उस रीति से शास्त्र के बिरुद्ध हैं जिस रीति से कि शास्त्र आपस में बिरुद्ध हैं परन्तु मैं इस समय बिरुद्धता की बात नहीं कहता था मेरा अभिप्राय यह था कि जब इन लोगों ने अपने नये २ पंथ चलाये थे तब उन्हों ने और उनके शिष्यों ने उन पंथों को अधिक दृढ़ करने और बढ़ाने के निमित्त ग्रन्थ भी बनाये। जैसे कबीर और उसके संगियों ने बहुतेरे ग्रन्थ बनाये परन्त कबीर पंथी को छोड़ कोई उन ग्रन्थों को ईश्वरोक्त शास्त्र नहीं मानता है। और इसी प्रकार से नानकशाही और सेव नारायणी इत्यादि एक २ पंथों के शिष्यों को छोड़ सब

कोई मान लेता है कि ये ग्रन्थ सब के सब इन आचार्य्यों की बुद्धि मात्र की कल्पना हैं। अब इन ग्रन्थों और साधारण शास्त्रों में केवल प्राचीनता का भेद है जैसा इन दिनों के लोग अपनी बुद्धि से नये २ पंथ निकालते हैं तैसे ही पूर्व काल के शास्त्र कर्त्ताओं ने नये २ पंथ खड़े किये और उनके बढ़ाने के लिये अपनी बुद्धि से शास्त्र भी बनाये। जैसे बौद्धियों ने वेदों को त्याग कर अपने लिये एक नया मत स्थापन किया तैसे वेद के मतावलम्बियों ने अपनी बुद्धि मात्र से अनगिणित भिन्न २ मतों की कल्पना करके उनके स्थापन के लिये शास्त्र लिखा। इसी प्रकार से चैतन्य बल्लभाचार्य्य रामानुज आदिकों ने अपनी बुद्धि मात्र से नये २ पंथ चलाये। जैसे बर्षा की ऋतु में उपजाऊ भूमि नाना प्रकार की तृण आदि बनस्पति उगाती है उसी भांति इस देश के पण्डितों की बुद्धि से नाना प्रकार के शास्त्र उत्पन्न हुए। व्यासजी के काल से आज लों पण्डितों की बुद्धि नये २ शास्त्र के बनाने से थम्भ नहीं गई। क्या आप किसी प्रमाण से इस बात को सिद्ध कर सक्ते हैं कि जो २ शास्त्र किसी एक काल से पहिले बन गये सो ईश्वरोक्त शास्त्र हैं परन्तु जो २ शास्त्र उसके पीछे बन गये सो केवल मनुष्य रचित पुस्तकें हैं अथवा आप कोई ऐसा चिन्ह बतला सक्ते हैं जिस्से इन सारे भिन्न २ और बिरुद्ध मतों और शास्त्रों का बिचार कर उन में से एक सच्चा ईश्वरोक्त शास्त्र पहचानके प्रमाणिक कर सक्ते हैं॥

वेदविद्वान् का वचन॥

एक ऐसा चिन्ह तो क्या यह नहीं होगा कि ये सारे आचार्य्य और भिन्न २ पंथ के चलानेवाले सब के सब वेद पुराण आदिकों को ईश्वरोक्त शास्त्र मानने में सम्मति रखते हैं॥

सत्यार्थी का वचन ॥

यद्यपि आपका कहना इस बिषय में ठीक भी होता तथापि इस्से सिद्ध नहीं हो सक्ता कि वेद पुराण आदि ईश्वरोक्त शास्त्र हैं। क्योंकि प्रत्यक्ष है कि साधारण लोग अनेक निष्प्रमाण अयथार्थ बातें सत्य मानते हैं। किसी मनुष्य के बरन सारे मनुष्यों के निरे मानने से कोई बात सत्य अथवा असत्य नहीं ठहरती है परन्तु यथार्थ प्रमाण से बात सिद्ध होती है। परन्तु आपका कहना परीक्षा करने से यथार्थ नहीं ठहरेगा क्योंकि इन आचार्य्यों में से कितने वेद पुराण आदिकों को ईश्वरोक्त शास्त्र मानने के बदले उनको खण्डन करते हैं। फिर जो स्पष्ट रूप से ऐसा भी नहीं करते तथापि शास्त्रों की शिक्षा के बिरुद्ध अपनी नई शिक्षा अपने ग्रन्थों में लिखते हैं जो लोग बिशेष वर्णों का मानना और मूर्त्तिपूजा करना और देवतों का भजन इत्यादि रीतों को अपने ग्रन्थों में बर्ज्जित करते हैं ऐसे लोगों के वेदादि सत्य कहने से क्या। अब मेरा कहना यह है कि जिस रीति आज कल के नये २ ग्रन्थों में दैवीय उत्पत्ति का कोई लक्षण दृष्ट नहीं आता है बरन एक २ पंथ के शिष्यों को छोड़ सब कोई मान लेता है कि ये ईश्वरोक्त शास्त्र नहीं हैं केवल मनुष्य रचित पुस्तकें हैं। उसी रीति पूर्व काल के ग्रन्थों में भी दैवीय उत्पत्ति का लक्षण कहीं देख नहीं पड़ता है और ईश्वरोक्त शास्त्र होने का कोई प्रमाण नहीं मिलता है बरन दोषी मनुष्य की बुद्धि मात्र से उत्पन्न होने के चिन्ह उन में अधिकाई के सङ्ग सूझ पड़ते हैं। इस कारण उनको भी मनुष्य रचित पुस्तक मानना चाहिये क्योंकि निरे प्राचीन होने से मनुष्य रचित पुस्तक ईश्वरोक्त शास्त्र बन नहीं जाते हैं॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

आपने जो भिन्न २ मतों की बिरुद्धता बताई है सो आप की समझ में बिरुद्धता है परन्तु हम लोग उसको सचमुच बिरुद्धता नहीं मानते हैं। क्योंकि वे सारे पंथवाले एकही सनातन परमात्मा को जो केवल नामों से बिलक्षण है भजते हैं ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

हे पण्डितजी। आपको स्मरण होगा कि षट्दर्शन के बिषय में मैं सिद्ध करचुका कि उनकी सचमुच बिरुद्धता है। क्योंकि एक कहता है कि ईश्वर है। एक कहता कि ईश्वर नहीं। जो कोई कहे कि ये दो बातें सचमुच बिरुद्ध नहीं सो अपने को एक ऐसा मनुष्य प्रकट करता है जो स्पष्ट शब्दों का अर्थ नहीं जान सक्ता है। आप तो कधी ऐसा न कहेंगे। फिर भिन्न २ पंथों की बिरुद्धता पीछे वर्णन करूंगा अब एक और बात कहने चाहता हूं जिस्से अपना अभिप्राय अधिक प्रत्यक्ष करूं। पूर्व काल में भास्कर आदि इस देश के प्रवीण ज्योतिषियों ने अपनी विद्या के वर्णन में सिद्धान्त नाम ग्रन्थ बनाये। इन में वे अपनी बुद्धि के अनुसार अपने मत के सिद्ध करने के निमित्त बुद्धि रूपी प्रमाण लाये हैं। इन ग्रन्थों में भी अनेक प्रकार का परस्पर बिरोध देख पड़ता है और एक २ ज्योतिषी अपनी शक्ति के समान दूसरे के मत को खण्डन करने चाहता है। इन में से एक आर्य्या भट्ट नामी ने पृथ्वी के अपनी कील पर घूमने की वही शिक्षा बतलाई जिसको बिदेशी ज्योतिषियों ने इन दिनों में सिद्ध और प्रमाणिक करदिया है। जैसे ॥

भपञ्जरः स्थिरोभूरेवावृत्यावृत्य प्रातिदैवसिकौ ।
उदयास्तमयौ सम्पादयति नक्षत्रग्रहाणामिति ॥

अर्थात् नक्षत्र तो स्थिर हैं परन्तु पृथ्वी ही घूम २ कर नक्षत्र और ग्रहों को प्रतिदिन उदय और अस्त करती है ॥

परन्तु यह यथार्थ शिक्षा जिसको आर्य्या भट्ट ने अपनी बुद्धि मात्र से निर्णय किई थी एक दूसरा ज्योतिषी ब्रह्म गुप्त नाम खण्डन करने चाहता था। फिर भास्कर आदि पण्डितों ने भूमण्डल के आकार और परिमाण के विषय में अनेक ऐसे सिद्धान्त बतलाये हैं जो शास्त्रों की शिक्षा के विरुद्ध हैं। आप को तो ज्ञान होगा कि पुराणकर्त्ता भूल करके पृथ्वी को चपटा आकार और कछुए की पीठ पर अथवा शेषनाग के सिर पर संभाले हुए बतलाते हैं। परन्तु भास्कराचार्य्य यथार्थ प्रमाण का अभिलाषी हो और अपनी बुद्धि शक्ति से ठीक शिक्षा का खोज कर यह सिद्धान्त प्रकट करता है कि पृथ्वी गोलाकार है और किसी के आधार से नहीं रहती है। जैसे ॥

भूमेः पिण्डः शशाङ्कज्ञकविरविकुजेज्यार्किनक्षत्रकक्षा
वृत्तैर्वृत्तोवृतः सन् मृदनिलसलिलव्योमतेजोमयोऽयम् ।
नान्याधारः स्वशक्त्यैव वियति नियतं तिष्ठतीत्यादिना ॥

अर्थात् पृथ्वी का पिण्ड गोल है और चन्द्र बुध शुक्र सूर्य्य मङ्गल बृहस्पति शनैश्चर और नक्षत्रों के घूमने के मार्गों से घेरा हुआ मिट्टी वायु जल आकाश और तेज से बना है उसका दूसरा कोई आधार नहीं है किन्तु केवल अपनी सामर्थ से सदा आकाश में रहता है ॥

फिर यह भी कहा है ॥

मूर्त्तौ धर्त्ता चेद्धरित्र्यास्तदन्यस्तस्याप्यन्योस्येवमत्रानवस्था ।
अन्त्ये कल्पा चेत् स्वशक्तिः किमाद्ये किन्नोभूमिरित्यादिना॥

अर्थात् यदि धरित्री का कोई दूसरा मान आधार होगा तो उसका भी दूसरा आधार होगा फिर उसका भी कोई इस भांति से इस में अनवस्था होगी यदि किसी अन्त में ऐसी कल्पना करें कि वह अपनी सामर्थ से रहता है तो आदि में क्यों नहीं करते ॥

अब मैं आप से पूछता हूं कि भूमण्डल के आकार आदि के बिषय में पुराणों की शिक्षा और भास्कराचार्य्य की शिक्षा आप परस्पर सचमुच बिरुद्ध जानते हैं कि नहीं ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

निस्सन्देह ये दो मत आपस में बिरुद्ध हैं क्योंकि पृथ्वी का चपटा आकार होना और गोल आकार होना फिर किसी दूसरे के आधार से रहना और अपनी सामर्थ से रहना ये बातें ऐसी बिरुद्ध हैं कि कोई उनका मिलान नहीं कर सक्ता है परन्तु क्या शास्त्रों की शिक्षा सिद्ध है अथवा भास्कर की भावना ठीक है यह तो एक दूसरा बिषय है ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

भला आप मान लेते हैं कि ये मत आप से सचमुच बिरुद्ध हैं फिर इसी प्रकार की बिरुद्धता शास्त्रों के भिन्न २ मतों से देख पड़ती है इसको भी बिरुद्धता मानना चाहिये परन्तु आप यह भी बतलाइये कि क्या भास्कराचार्य्य के सिद्धान्त ईश्वरोक्त शास्त्र के समान हैं अथवा उसने केवल अपनी बुद्धि मात्र से अपने ग्रन्थ को लिखा ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

नहीं उसके सिद्धान्त तो शास्त्र नहीं हैं केवल उसी की भावना मात्र हैं इस कारण शास्त्र के बिरुद्ध होने से शास्त्र खण्डन नहीं होता है ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

आपका कहना ठीक है कि भास्कर ने अपनी बुद्धि मात्र से अपना सिद्धान्त लिखा। भास्कर आदि ज्योतिषी सब के सब आप मान लेते हैं कि हम लोगों की विद्या की कोई दैवीय उत्पत्ति नहीं है केवल लौकिक विद्या है परन्तु इस दशा में आप ध्यान कीजिये कि उनकी लौकिक विद्या शास्त्रों की विद्या से श्रेष्ठ और प्रमाणिक है। भास्कर ने यह बात देखके शास्त्रों के बिषय में यों कहा है। जैसा ॥

अत्र गणित स्कन्धे उपपत्तिमाने वागमप्रमाणमिति ॥

अर्थात् इस गणित स्कन्ध के बिषय में युक्तिमान ही शास्त्र प्रमाण है ॥

और तनिक सन्देह नहीं है कि इस बिषय में भास्कर का सिद्धान्त यथार्थ और प्रमाणिक है और समस्त प्रकार की परीक्षा की नई २ युक्तियों से सिद्ध और अटल ठहरती है क्योंकि इसी विद्या के अनुसार बिदेशी नौका विद्या का सम्पूर्ण काम इन दिनों में होता जाता है बिदेशी लोग नक्षत्रों को छोड़ और किसी लक्षण को बिन देखे बारहों मास नौका गमनागमन करते और किसी स्थान से सिधारके अपनी नौका सीधी पूर्व दिशा को अथवा सीधी पश्चिम दिशा को चलाके अन्त में उसी स्थान पर पहुंचते जहां से निकल गये। और जिस जिस स्थान

पर पहुंचने चाहते हैं केवल नक्षत्रों को देखके ठीक उसी स्थान पर पहुंचते हैं। इस पर ध्यान करने से दो बात सिद्ध होती हैं॥

१ जब ऐसे बिषयों में शास्त्रों की शिक्षा अशुद्ध और अयथार्थ है तो दूसरे बिषयों में भी उनकी शिक्षा पर क्या भरोसा हो सक्ता है॥

२ सिद्धान्त के सूक्ष्म और प्रमाणिक बातों के बिचार करने से उनके कर्त्ताओं की बुद्धि की सामर्थ और तीक्ष्णता सिद्ध होती है। फिर यदि प्राचीन पण्डितों की बुद्धि सिद्धान्त के बनाने पर समर्थ थी तो साङ्ख्य आदि दर्शनों और शास्त्रों के बनाने पर क्योंकर समर्थ न होवे॥

वेदविद्वान् का वचन॥

आपका वर्णन ठीक होगा परन्तु यदि दर्शन आदि शास्त्रों की एक निरी लौकिक उत्पत्ति हुई तो क्या कारण है कि इन दिनों भी ऐसी ज्ञान पूर्वक पुस्तकें लिखी नहीं जाती हैं॥

सत्यार्थी का वचन॥

पण्डितजी। इसका एक कारण यह है कि इन दिनों में इस देश के पण्डित नई विद्या प्राप्त करने में तत्पर नहीं रहते हैं। पूर्व काल में ऐसा नहीं था उस काल प्राचीन पण्डित बड़े साहस के सङ्ग सत्य बात के निर्णय करने में निरन्तर श्रम करते थे। जो मनुष्य ऐसा करते हैं उनकी बुद्धि की सामर्थ बढ़ती जाती है और वे नई २ विद्या प्राप्त करते जाते हैं क्योंकि विद्या उस प्रकार का पदार्थ नहीं है कि कोई मनुष्य उसका अन्त पावे अथवा उस पर सीमा बांधे। जैसी ईश्वर की सृष्टि असीम और प्रकृत के पदार्थ असङ्ख्य हैं वैसे जो मनुष्य अभिमान रहित हो

अपने को अज्ञान समझ आदर मान की रीति मूढ़ विषयों की परीक्षा कर सत्य का खोज करे सो ही मनुष्य नई २ विद्या पावेगा। इसके अनुसार प्राचीन पण्डितों ने भूमण्डल नक्षत्र आदि की यथार्थ दशा जानने के अभिलाषी हो ज्योतिष विद्या को निर्माण किया। और वेदान्ती आदि जो परम पुरुषार्थ के खोजक थे अपनी बुद्धि की शक्ति से नाना प्रकार की शिक्षा के प्रचारक ठहरे। परन्तु इन दिनों के विद्यार्थी बिना परीक्षा किये और बिना जांचे पुरखे लोगों की विद्या सम्पूर्ण जान शास्त्रों की शिक्षा जैसी की तैसी ग्रहण करते हैं। इस रीति से विद्या को कुछ बढ़ती कभी नहीं हो सक्ती और विद्यार्थी की बुद्धि दृढ़ता पाने की सन्ती अभिमानी और निर्बल और ऊषर भूमि के समान निष्फल होती जाती है॥

वेदविद्वान् का वचन॥

आपके कहने से जान पड़ता है कि आपकी समझ में भी प्राचीन पण्डितों और शास्त्रों की विद्या सत्य और प्रमाणिक थी तो इस दशा में नई विद्या का खोज करना क्या प्रयोजन है॥

सत्यार्थी का वचन॥

मैं ने तो पण्डितजी नहीं कहा था कि उनकी सम्पूर्ण विद्या सत्य और प्रमाणिक थी। मैं ने केवल यह कहा कि वे पण्डित नई विद्या के खोज में भली भांति अपना मन लगाते थे और उन में से कितने जैसे आर्य्य भट्ट और भास्कर ने ज्योतिष विद्या की कई एक सत्य बातें निर्णय किईं। और इस प्रकार के अभ्यास करने में उनकी बुद्धि आज कल के पण्डितों की

बुद्धि से बड़ी समर्थ थी परन्तु असङ्ख्य बातें रह गई जिनका भेद उन्हों ने नहीं पाया और एक कारण से उनका जितना परिश्रम भी था तथापि ऐसा फलदायक नहीं था जैसा चाहिये क्योंकि सत्य के खोज करते भी वे बहुधा अपनी अथवा अपने पितरों की कल्पी हुई भावना का पालन अपने मन में करते थे और इस हेतु से अपने अनजान पक्ष के मारे निर्मल सत्य को भली भांति देख नहीं सक्ते थे। क्योंकि गूढ़ विषयों की परीक्षा करने में निपट अवश्य है कि सत्यार्थी अपने मन को सर्वथा निर्पक्ष कर रक्खे। जो अपने को ज्ञानी जानता है वह क्या सीख सक्ता है वह तो औरों को सिखाना चाहता है। इस कारण जो २ विवेचना और भावना पहिले से मन में रही हैं इनको बिना दूर किये तत्वज्ञान का भेद मन पर नहीं खुलता है। इसी कारण से बिदेशियों की विद्या ऐसी प्रमाणिक और प्रति दिन ऐसी बढ़नेवाली है कि परखी हुई और जांची हुई बात को छोड़ वे किसी बात को सत्य नहीं मानते हैं। निरी भावना और विवेचना पर तनिक भी आसरा नहीं धरते हैं इस कारण से नये २ भेद प्रति दिन उन पर प्रकट होते हैं और सृष्टि के तत्व और परमाणु उनकी बुद्धि के आधीन होते हैं। परन्तु जब लों इस देश के पण्डित पूर्व काल की विद्या को सम्पूर्ण और समाप्त जानके उसी का पक्ष अपने मन में धरते हैं तब लों उनकी बुद्धि और विद्या की बढ़ती अनहोनी है॥

वेदविद्वान् का वचन॥

क्या किसी दूसरे जात के मनुष्यों ने कोई ग्रन्थ जो हमारे शास्त्रों के तुल्य ज्ञान पूर्वक और आदर के योग्य थे किसी काल में बनाये॥

सत्यार्थी का वचन ॥

पण्डितजी। जिस रीति भारतखण्ड के पण्डितों ने दर्शन आदिकों को बनाया उसी रीति अन्यदेशी भी गूढ़ बिषयों के निर्णय करने में तत्पर रहे हैं॥

सर्वज्ञा यवना राजन् शूराश्चैव विशेषत:

अर्थात् हे राजा। यवन लोग सर्वज्ञ हैं और विशेष करके शूर हैं॥

महाभारत में यवनों का यही बखान है आप जानिये कि ये यवन उन लोगों से बहुत प्राचीन थे जो आज कल इस देश में मुसलमान कहलाते हैं क्योंकि मुसलमानों का काल बारह सौ पचास बर्ष से पहिले हुआ भी नहीं था। वे प्राचीन यवन कविता और न्याय शास्त्र विशेष और शिल्प विद्या में अति प्रवीण होके सम्पूर्ण भूमण्डल में बिख्यात थे उस देश के पण्डितों ने सृष्टि की उत्पत्ति के बिषय में तत्वज्ञान के अभिलाषी हो नाना प्रकार की शिक्षा कल्पना किई। परम पुरुषार्थ आदि बिषयों की चर्चा में जो २ पुस्तकें उन्हों ने लिखीं सो आज लों संसार में उपस्थित हैं इन ग्रन्थों के बिचार करने से उन पण्डितों की बुद्धि की अति महान गम्भीरता और तीक्ष्णता प्रकट होती है। उन में से एक जगत के प्रसिद्ध पण्डित अरस्तू नामी ने न्याय अलङ्कार आदि विद्याओं के अनेक ग्रन्थ बनाये। जो कोई उसके ग्रन्थों को बुद्धि रूपी ध्यान करके जांचेगा सो उसको गौतम आदिकों से न्यून आदर के योग्य मान नहीं सकेगा परन्तु अरस्तू आदि समस्त यवन पण्डितों ने कहा कि हमारी विद्या ईश्वरावेश से नहीं बरन हमारी बुद्धि के श्रम संयुक्त अभ्यास से उत्पन्न हुई। यदि इन यवन ऋषियों के ज्ञान

की एक निरी लौकिक उत्पत्ति हुई तो गौतम आदिकों की दैव्य उत्पत्ति क्योंकर सिद्ध होवे ऐसी बातों के बिचार करने से उनके शास्त्रों की लौकिक उत्पत्ति निस्सन्देह सिद्ध होती है ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

उन लोगों का कैसा धर्म्म था ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

धर्म्म के बिषय में प्राचीन यवनों का एक ऐसा मत था जैसा आज कल भारतखण्ड में प्रचलित है अर्थात् वे नाना प्रकार के देवताओं की पूजा करते थे अपने मन में कल्पना करके क्रि दिवस्पति आदि देवते और हीरा आदि देवी हैं अपनी इस भावना से भुलाये हुए इन पुरुषों ने उनका भजन किया। इसके उपरान्त एक नया मत उस देश में फैल गया और अन्त में समस्त यवनों ने इन कल्पे हुए मिथ्या देवताओं की पूजा छोड़ दिई। अब उस प्रसिद्ध यवन भूमि में उन प्राचीन देवताओं के भजन का कोई लक्षण कहीं देख नहीं पड़ता है परन्तु टूटे हुए खम्भ और मूरतों के शून्य मन्दिरों के टुकड़े कहीं २ बिथराये हुए आज लों भी दृष्ट पड़ते हैं ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

ऐसा जान पड़ता है कि आपके सम्पूर्ण वृत्तान्त का सार यही है अर्थात् मनुष्य जात अपने स्वाभाविक मन की शिक्षा से जान सक्ता है कि एक परमेश्वर है। फिर इस संसार पर जिसे उसने सिरजा है ध्यान लगाने से परमेश्वर की महिमा समझी जाती है। अब आदि पुरुष अर्थात् मनुष्य जात का पहिला पिता

उत्पन्न हुआ यद्यपि उसकी बुद्धि की सामर्थ्य परिमित थी तथापि वह परमेश्वर का सत्य ज्ञान रखता था परन्तु जब से परमेश्वर की आज्ञा भङ्ग करके वह पाप में पतित हुआ तब से परमेश्वर का ज्ञान क्रम २ उसके सन्तान में से घटने लगा। फिर जिस काल आर्य्या कुल भारतखण्ड में आया उस काल वे परमेश्वर का निर्मल और तत्व ज्ञान नहीं रखते थे इस कारण जब वे वेद के सूत्रों को बनाने लगे तब उन्हों ने भ्रम करके अग्नि इन्द्र आदि देवताओं की जो पूजा के योग्य नहीं थे स्तुति बखानी। इसके पीछे इन्द्र आदिकों से भिन्न अनगणित और देवताओं की कल्पना करके देवियों के सङ्ग भजने लगे। फिर आप कहते हैं कि शास्त्रों के बिचार करने से देवताओं के बिषय में मतों का क्रम से अन्तर होना सिद्ध होता है और शास्त्रों के कर्त्ताओं में एक परस्पर बिरुद्धता देख पड़ती है कि कौन २ देवता श्रेष्ठ है। इसके अनुसार वेदान्त आदि शास्त्रों में भी जिनको मुनि आदि सत्यार्थियों ने बनाया ऐसी ही बिरुद्धता दृष्टि आती है। फिर वेद वेदाङ्ग पुराण आदि समस्त शास्त्रों के चक्र में कोई ऐसा तात्पर्य्य नहीं मिलता है जिसका निर्णय और प्राप्त करना मनुष्य की बुद्धि से बाहर था। आप यह भी कहते हैं कि बहुत काल के बीतने से शास्त्रों के प्राचीन कर्त्ताओं का प्रमाणिक वृत्तान्त सर्वथा खोया गया और अब नहीं मिल सक्ता है क्या आपके कहने का सार यह नहीं॥

सत्यार्थी का वचन॥

आप ठीक कहते हैं और इन सारी बातों से मैं यह परिणाम निकालता हूं कि शास्त्रों का ब्रह्मा से प्रचार होना किसी एक प्रमाण से सिद्ध नहीं हो सक्ता है। ऐसा वृत्तान्त तो मैं ने किया

है इसके उत्तर में जो कुछ आप कहिये मैं बड़े ध्यान के साथ सुन लूंगा ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

आपका बहुरूपी प्रमाण जांचने के लिये बहुत ध्यान करना प्रयोजन है क्योंकि इस्से पहिले शास्त्रों के विषय में ऐसे दूषण का वृत्तान्त मैं ने कभी नहीं सुना। आपके प्रमाणों में जो २ चूक और कलङ्क पहिले दृष्टि से देख पड़ते हैं इस समय में नहीं बतलाऊंगा क्योंकि अब दिन बहुत चढ़ा है परन्तु सांज काल को जो आपकी इच्छा हो मैं दो एक बात पूछूंगा और मुझे निश्चय है कि आप निर्पक्ष होके मेरे सन्देहों का बिचार करेंगे ॥

ग्रन्थकर्त्ता का वचन ॥

इस पर हम तीनों पुरुष बिदा होके अपने २ स्थान को चले गये ॥

मतपरीक्षा का पांचवां सत्सङ्ग समाप्त हुआ ॥

इति ॥

छठा सत्सङ्ग ॥

प्रमाणिक वृत्तान्त की चर्चा ॥

ग्रन्थकर्त्ता का वचन ॥

उसी दिन मैं ने वह अद्भुत समाचार सुना जो इन दिनों चीन देश से आया है अर्थात् कि उस देश के बहुधा निवासी अपने पितरों का धर्म्म छोड़ और अपनी मूरतों को त्याग कर ख्रिस्तीय मत की अनेक शिक्षा ग्रहण करते हैं। और जब सांझ काल को मैं वेदविद्वान् और सत्यार्थी के सम्वाद को सुनने को गया तब मैं ने उन दो पण्डितों के पास इस समाचार की तनिक चर्चा किई कि यह कैसी आश्चर्य्य की बात है क्योंकि सुनने में आता है कि भूमण्डल के समस्त निवासियों का तीसरा भाग चीन देश में रहता है अर्थात् भूमण्डल में नव्वह करोड़ मनुष्य हैं और उन में से चीन में तीस करोड़ परन्तु भारतखण्ड में हिन्दू मुसलमान और अङ्गरेज़ सब समेत चौदह करोड़ से अधिक न होंगे। इस बात के सुनते ही वेदविद्वान् बड़ा आश्चर्य्यित हुआ और कहने लगा कि कदाचित् यह वृत्तान्त प्रमाणिक नहीं है। तब सत्यार्थी ने उसको बतलाया कि इसकी कितनी एक बातें सन्देही होवें तो होवें परन्तु इस में सन्देह नहीं है कि उस देश में धर्म्म का एक बड़ा उलटाव होता जाता है और ख्रिस्तीय मत प्रबल होता जाता है। फिर उन प्रमाणों का भी वर्णन करने लगा जिन से यह समाचार सिद्ध और प्रमाणिक ठहरता है तब वेदविद्वान् ने कहा ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

आपका वृत्तान्त सुनने से एक बात का स्मरण मेरे चित्त में आता है जो अगिले सम्वादों के सम्बन्ध में है और मैं आप से उसका प्रश्न करने चाहता हूं सो यह है अर्थात् कि वह कौनसा प्रमाण है जो आपकी समझ में किसी भूतकाल के वृत्तान्त सिद्ध करने के लिये योग्य और यथार्थ ठहरता है। यदि वेद का ब्रह्मा के मुख से निकलना परम्परा की बात से सिद्ध नहीं हो सक्ता है तो कोई प्राचीन वृत्तान्त किस प्रकार से निर्णय किया जावे क्या आपकी समझ में किसी भूत वृत्तान्त का निश्चय करना सब अनहोना है परन्तु यदि किसी प्राचीन वृत्तान्त के निर्णय करने में परम्परा की बात काम आती है तो वेद आदि-कों के सिद्ध करने के लिये परम्परा की बात में क्या दोष है ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

हे पण्डितजी। मैं नहीं कहता हूं कि भूत वृत्तान्त के निर्णय करने के लिये परम्परा की बात कधी काम की नहीं हो सक्ती है। इस बिषय में जो कुछ मेरी बुद्धि के अनुसार यथार्थ और प्रमाणिक देख पड़ता है आप सुनके भली भांति बिचार की-जिये। ऐसा जान पड़ता है कि भूत वृत्तान्तों का जो परम्परा से होते आये हैं कुछ तो बिश्वास योग्य है और कुछ बिश्वास योग्य नहीं है। क्योंकि एक वृत्तान्त का यथार्थ प्रमाण मिलता है और दूसरे का कोई प्रमाण दृष्टि नहीं आता है इस कारण एक २ वृत्तान्त की कथा निर्णय करने के लिये कि बिश्वास योग्य है कि नहीं उस कथा के बिशेष लक्षण जांच लेना अवश्य है। जैसे कि यह कथा किस काल में और किस स्थान पर और किसके मुख से उत्पन्न हुई और इसके प्रथम सुननेहारे

कैसे और कितने थे और क्या यह कथा वृत्तान्त ही के उपस्थित होने पर लिखी गई अथवा केवल बाप दादों के मुख से कही हुई परम्परा से होती आई है। ऐसे लक्षणों की परीक्षा करने से विवेकी लोग जान लेते हैं कि वृत्तान्त सत्य है कि असत्य॥

वेदविद्वान् का वचन॥

मैं जानता हूं कि अनेक कारणों से जैसे स्वभाव स्थान काल इत्यादि के अन्तर से मनुष्यों में बड़ा अन्तर होता है। कितने मनुष्य निर्बोध अज्ञान अविवेकी मन के क्षुद्र विद्याहीन सामान्य विश्वासी और भोले हैं। फिर कितने हैं जो पण्डित प्रवीण ज्ञानी ध्यानी मन के स्वतन्त्र विवेकी और सत्यार्थी हैं। और संसार में प्रसिद्ध है कि कितने देशों के निवासी जो पहिले अज्ञानता में डूबे थे निदान विद्या और ज्ञान के प्राप्त करने से यशवन्त ठहरे। अज्ञान लोगों की बुद्धि निर्बल रहती हैं और इस कारण वे नहीं जान सक्ते हैं कि कौन २ कथा असम्भव और निष्प्रमाण और कौन प्रमाणिक है। पूर्व काल का जो वृत्तान्त वे सुनते हैं सो अपने कानों से तुरंत पी लेते और बिना जांचे बिश्वास करते हैं। परन्तु ज्ञानियों और विद्यावानों की बुद्धि अधिक बलवन्त है। वे कथाओं के निर्णय करने की शक्ति रखते हैं कि कौन प्रमाणिक है और कौन अप्रमाणिक। अब आप कह चुके हैं कि दर्शनों और सिद्धान्तों के कर्त्ता विद्यावान् और बुद्धि के सामर्थी थे तो ऐसे पण्डित अप्रमाणिक कथाओं को क्यों ग्रहण कर सक्ते॥

सत्यार्थी का वचन॥

पण्डितजी। ऐसा जान पड़ता है कि वे जो लौकिक विद्या में बड़े विद्यावान् और विवेकी हैं सो बहुधा धर्म्म के बिषय

में अपनी बुद्धि को दौड़ाना अनुचित जानते हैं और कभी २ वे धर्म की चिन्ता सच्चे मन से नहीं करते अथवा यदि वे कदाचित् कुछ चिन्ता भी करते तथापि वे अपने लौकिक सुख और संसार में अपने आदर और सम्मान की अधिक चिन्ता करते हैं। इस दशा में कुछ आश्चर्य्य की बात नहीं है कि वे वृथा और निष्प्रमाण कथाओं को ग्रहण करते हैं। क्योंकि यदि वे उनको तर्क करें तो समस्त लोग उन्हें पाषण्डी कहेंगे और बहुतेरे जन इस प्रकार की अपनिन्दा से निपट डरते हैं कदाचित् ऐसे २ कारणों से होगा कि प्राचीन पण्डितों ने धर्म्म विशेष की कथाओं की परीक्षा और निर्णय करना बहुधा छोड़ दिया है। जैसे न्याय सूत्र के कर्त्ता ने शब्द प्रमाण के वर्णन में कहा है। कि (आप्तोक्तं शब्दः) अर्थात् विश्वास योग्य का वचन शब्द प्रमाण है। परन्तु विश्वास योग्य का कैसा लक्षण है अथवा वह किस प्रकार से जाना जाता है इसका वर्णन उसने सर्वथा छोड़ दिया है। इस रीति से सारे प्राचीन पण्डितों ने ऐसे विषयों का निर्णय करना छोड़ दिया है और यही कारण है कि हिन्दू शास्त्रों में पूर्व काल का प्रामाणिक वृत्तान्त नहीं मिलता है ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

आप कृपा करके बतलाइये कि प्रामाणिक और यथार्थ वृत्तान्त किस प्रकार से जाना जाता है ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

जो कोई वृत्तान्त हो सो शब्द प्रमाण से अर्थात् साक्षी के वचन से प्रामाणिक हो सक्ता है। परन्तु साक्षी का ठीक अर्थ है अपनी

आंखों से जो देखनेवाला और ऐसे साक्षी का वचन तब विश्वास योग्य होगा जब उसके विषय में ये दो बातें सिद्ध हो चुकीं अर्थात् ॥

१ जब साक्षी को भली भांति अवसर और सामर्थ्य थी कि निर्पक्ष होके उस वृत्तान्त को सम्पूर्ण रूप से परख लेवे जिस्से वह आप धोखा न खावे ॥

२ यह जब प्रत्यक्ष लक्षणों से सिद्ध है कि साक्षी सत्पुरुष और विश्वासी है जिस्से वह जान बूझके किसी को धोखा न देवे ॥

विश्वास योग्य साक्षी के लिये ये दोनों बातें अवश्य हैं। क्योंकि यदि वह आप किसी कारण से धोखा खावे तो उसका वचन विश्वास योग्य नहीं है और यदि वह किसी अभिप्राय के लिये दूसरों को धोखा देने चाहे तब भी वह विश्वास योग्य नहीं है अर्थात् समर्थ होना और विश्वस्त होना ये दो बातें विश्वास योग्य साक्षी के लिये अवश्य हैं ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

सारे वृत्तान्तों में इन बातों का निर्णय करना बड़ा कठिन काम देख पड़ता है क्या आपकी समझ में इसके बिना कोई वृत्तान्त सत्य नहीं हो सक्ता है ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

मैं नहीं कहता हूं कि इसके बिना कोई वृत्तान्त सत्य नहीं हो सक्ता है परन्तु यह कि इसके बिना कोई वृत्तान्त निश्चय सिद्ध और प्रमाणिक नहीं हो सक्ता है। कदाचित् सत्य होवे कदाचित् असत्य और यह दुबधा की दशा है परन्तु ऐसी

दशा में बुद्धिमान् जन अधिक प्रमाण चाहेगा और खोज करेगा और किसी भारी प्रकरण में बिना भारी प्रमाण के बिस्वास नहीं लावेगा । परन्तु इन बातों का निर्णय करना ऐसा बहुत कठिन काम नहीं है क्योंकि संसार के ब्यवहार में अनेक ऐसे प्रकरण सब किसी को प्रति दिन होते हैं जिन में इस प्रकार का निर्णय करना अवश्य पड़ता है । और अपने किसी संसारिक लाभ के लिये सब कोई भली भांति परख लेने और निर्णय करने जानता है । अब वह मनुष्य जिसके मन में परलोक और धर्म्म की ऐसी चिन्ता है जैसी बहुतेरे मनुष्यों के मन में संसार की चिन्ता है सो इस रीति से निर्णय करना कुछ कठिन नहीं जानेगा परन्तु वह जो सत्य धर्म्म की कुछ चिन्ता नहीं करता है सो इतना भी अभ्यास करना निपट भारी कष्ट समझके ग्रहण नहीं करेगा ऐसा मनुष्य निस्सन्देह धर्म्म बिशेष की सारी कथा प्रमाणिक हो कि अप्रमाणिक सब समान जानेगा ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

यदि आपका वर्णन ठीक होवे तथापि मैं नहीं समझता हूं कि भूत वृत्तान्त के बिषय में किस रीति से काम आवेगा । क्योंकि प्राचीन वृत्तान्त के देखनेवाले सब के सब बहुत काल से परलोक को चले गये सो हम उनका वचन किस प्रकार से सुन भी सकें ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

हम उनका वचन तो सुन नहीं सक्ते हैं परन्तु यदि उनका वृत्तान्त ग्रन्थ में लिखा है तो इसको पढ़के निर्णय कर सक्ते

हैं। भूत काल का वृत्तान्त तो दो प्रकार का है। पहिला वह जो ग्रन्थ में नहीं लिखा है केवल मुख से कहा आया है। दूसरा वह जो ग्रन्थ में लिखा है। अब प्राचीन काल का वह वृत्तान्त जो ग्रन्थ में नहीं लिखा है सो किसी रीति से निर्णय नहीं हो सक्ता है। सब कोई जानता है कि बर्त्तमान काल का भी जो वृत्तान्त साक्षी का वचन परीक्षा करने से निर्णय नहीं होजाता है तो उस में कैसा बढ़ाव और कैसी मिथ्यता तुरन्त मिल जाती है। जब बर्त्तमान काल की भी यह दशा है तो प्राचीन काल की कैसी दशा होगी कदाचित् सत्य हो कदाचित् असत्य परन्तु निर्णय न होने से बुद्धिमान् उस पर बिश्वास नहीं लावेगा॥

फिर प्राचीन काल का वह वृत्तान्त जो ग्रन्थ में लिखा है सो भी दो प्रकार का है पहिला साक्षियों का वृत्तान्त दूसरा उनका वृत्तान्त जो साक्षी नहीं थे परन्तु वे केवल अपनी कल्पना अथवा औरों का जो साक्षी नहीं थे कहा लिखते हैं सो यह दूसरा प्रकार भी साक्षियों का वृत्तान्त न होके निर्णय नहीं हो सक्ता है इस कारण बुद्धिमान् उसका प्रमाण न देखके उस पर बिश्वास नहीं लावेगा॥

पहिला प्रकार अर्थात् साक्षियों का वृत्तान्त जो ग्रन्थ में लिखा है उस रीति से परख लेना और जांचना चाहिये जिस रीति से जीवते साक्षी का वचन परखा जाता है अर्थात्॥

१ क्या साक्षी को अवसर और सामर्थ्य थी कि भली भांति परीक्षा करके बिना धोखा खाये वृत्तान्त को स्पष्ट रूप से जान सके॥

२ क्या सत्यता और बिश्वास के लक्षण साक्षी में प्रत्यक्ष देख पड़ते हैं। जब ये दोनों बातें साक्षी में देख पड़ती हैं तब

ही बुद्धिमान् उसके वृत्तान्त पर बिश्वास लावेगा कि निस्सन्देह प्रमाणिक और सत्य है ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

क्या प्राचीन काल का कोई ऐसा वृत्तान्त मिल सक्ता है जो इस प्रकार की गूढ़ परीक्षा से प्रमाणिक निकलेगा ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

निस्सन्देह बहुत ऐसे वृत्तान्त हैं और मैं आपके लिये दृष्टान्त की रीति दो एक का वर्णन करूंगा आप सुनिये ॥

पूर्व काल में पारस देश के अति पराक्रमी महाराजा ने बड़ी सेना साथ लिये यवन देश् पर चढ़ाई किई। उस काल से आज लों पण्डितजी दो सहस्र तीन सौ बर्ष बीत गये हैं यवन लोगों ने यद्यपि थोड़े थे तथापि निर्भय शूर बीर हो अनेक सङ्ग्रामों में शत्रु की सेना को जीत अपने देश से भगा दिया। उस काल जब यह चढ़ाई हुई तब यवन देश में एक बालक था जब वह बालक जिसका नाम हेरोड़ोटुस था युवा होगया तब उसने चाहा कि उस युद्ध का ठीक इतिहास मैं लिखूंगा। उस काल उस बड़े युद्ध के सम्पूर्ण वृत्तान्त के बहुतेरे साक्षी जीवते थे उन साक्षियों के मुख से युद्ध का वृत्तान्त निर्णय करके उसने एक इतिहास का ग्रन्थ गद्य में बनाया ॥

फिर अपने ग्रन्थ के आरम्भ में उसने पारसी आदि परदेशियों का कुछ वृत्तान्त भी लिखा है। उन परदेशियों के इतिहास जानने का अभिलाषी हो बड़ा परिश्रम कर वह दूर २ देशों में यात्रा करने को गया और उन देशों के ऐसे लोगों के

मुख से जो अपने देश के इतिहास से सज्ञान थे उनके प्राचीन काल का वृत्तान्त सुन उसने अपने ग्रन्थ में लिखा है ॥

अब जाना चाहिये कि उस यवन देश में मेले की रीति लीला क्रीड़ा के बड़े काल क्रमिक सभा स्थापन हुई जिन में उस भूमि के भिन्न २ भागों के समस्त यवन निवासी आते थे। जब समस्त लोग इस रीति से लीला क्रीड़ा करने के लिये उपस्थित थे तब हेरोडोटुस ने सम्पूर्ण सभा के सन्मुख अपना इतिहास पढ़के सुनाया फिर यह पण्डित अपना वृत्तान्त सब लोगों को सुनाने की इच्छा कर एक नगर में जिसका नाम अथीनी था आया वह नगर समस्त यवन नगरों में प्रसिद्ध था और उसके निवासी अपनी प्रवीणता और बुद्धि के कारण बिख्यात थे फिर पारसियों के युद्ध में अथीनी नगर के निवासियों ने हरावल की रीति बड़े खटके का साम्हना कर अत्यन्त बीरता के सङ्ग शत्रु के नाश के लिये निपट परिश्रम किया था। जब ये मनुष्य एक सभा में उपस्थित थे तब उस इतिहासवेत्ता ने उनके सन्मुख अपना वृत्तान्त फिरके सुनाया उसके सुननेहारों में से बहुतेरों ने पारसियों की चढ़ाई के काल योद्धा हो उनके बिरुद्ध सङ्ग्राम किया था और बहुतेरे औरों ने जो चढ़ाई के काल बालक थे अपने पितरों के मुख से जो योद्धा थे उस सङ्ग्राम का वृत्तान्त सुन लिया था इस कारण हेरोडोटुस के समस्त सुननेहारे उसके वृत्तान्त का सारार्थ पहिले से जानते थे और उस काल वे न तो असभ्य न अविवेकी न अज्ञान थे उन में से बहुतेरे चतुर और ज्ञानी और विवेकी और मन के स्वतन्त्र और बिश्वास करने में धैर्य्यवान् थे। और संसार में प्रसिद्ध है कि उस नगर के सामान्य लोग भी तीक्ष्णबुद्धि और गूढ़ बिषयों के खोजक थे ऐसे लोगों के सन्मुख जब वे सभा में उपस्थित

थे हेरोडोटुस ने उस बड़े युद्ध का अपना वृत्तान्त सुनाया इस दशा में मेरी बुद्धि को अत्यन्त असम्भव देख पड़ता है कि ऐसे प्रवीण और विवेकी लोगों के सन्मुख हेरोडोटुस एक अप्रमाणिक और अयथार्थ वृत्तान्त सुनावे क्योंकि उस यवन भूमि में अनेक भिन्न २ भाग थे और एक २ भाग का एक अलग २ राज्य था इन अलग भागों के निवासी भिन्न २ राज्य के कारण आपस में द्वेष करते थे जो लोग इतिहास से सज्ञान हैं इस बात को भली भांति जानते हैं। इस दशा में हेरोडोटुस उन अलग भागों के निवासियों का कोई चरित्र किसी प्रकार से छिपा नहीं सक्ता था और यदि किसी एक भाग के निवासियों की बीरता वह बढ़ाव के सङ्ग बखान करता तो दूसरे भागों के निवासी निस्सन्देह उस पर दोष लगाते और उसके वृत्तान्त को झुटलाते इस कारण पण्डितजी निश्चय है कि युद्ध का जो वृत्तान्त उसने लिखा सो सम्पूर्ण रूप से बिश्वास योग्य है। फिर यह भी एक बात भली भांति निर्णय है कि यह वृत्तान्त जो उस काल लिखा था सो उसी काल भी सब लोगों में फैल गया क्योंकि दूसरे ग्रन्थकर्त्ताओं की एक श्रेणी साक्षी देती है कि उस काल से आज लों यह वृत्तान्त उपस्थित और प्रचलित हो रहा है और कुछ सन्देह नहीं है कि जो ग्रन्थकर्त्ता इस वृत्तान्त का उपस्थित होना बतलाते हैं सो उसको भली भांति जानते थे जो आप हमारे इस वर्णन का निर्णय करने चाहें तो पण्डितजी बहुतेरी पुस्तकें इस प्रकरण में बड़े सहज से मिल सक्ती हैं और इस रीति से हेरोडोटुस के वृत्तान्त की प्राचीनता भी सिद्ध होती है॥

वेदविद्वान् का वचन॥

तो क्या आप इन कारणों से उस वृत्तान्त की समस्त बातों को निश्चय प्रमाणिक समझते हैं॥

सत्यार्थी का वचन ॥

उस वृत्तान्त की वे बातें जो पारसी युद्ध के वर्णन में हैं सो निस्सन्देह बहुधा करके बिश्वास याेग्य हैं। परन्तु मैं ने कहा कि उस ग्रन्थ के आरम्भ में पारस आदि प्रदेशों का प्राचीन वृत्तान्त भी लिखा है। हेरोडोटुस उनका इतिहास जानने के लिये उन दूर देशों में घूमा पर देशों का यह इतिहास प्राचीनता आदि कारणों से बहुत बिश्वास याेग्य नहीं समझा जाता है। उन देशों के निवासियों के मुख से जो २ प्राचीन कथा उसने सुनी सो भली भांति निर्णय नहीं कर सका। क्योंकि वह उन देशों में बहुत काल नहीं रहा और उनके निवासियों के स्वाभाविक गुण से अच्छी रीति सज्ञान नहीं था। फिर जो कथा उसने सुनी सो बहुत प्राचीन वृत्तान्तों के बिषय में थी। इस दशा में निर्णय न होने के कारण वह परदेशों का वृत्तान्त बिश्वास याेग्य नहीं है। इस प्रकार से पण्डितजी वे जो प्रमाणिक इतिहास के विवेकी हैं हेरोडोटुस के वृत्तान्त के दो भाग कर लेते हैं उस भाग को जिस में वह अपने काल के उस बड़े युद्ध का वर्णन करता है वे बिश्वास याेग्य मानते हैं परन्तु उस भाग पर जिस में उस ने परदेशों का प्राचीन वृत्तान्त लिखा है वे बिश्वास नहीं लाते हैं क्योंकि वे यह बिचार करते हैं कि यद्यपि वह निस्सन्देह सत्य कहने को चाहता था तथापि परदेशों का प्राचीन वृत्तान्त भले प्रकार से निर्णय नहीं कर सका ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

क्या यवन लोगों के सम्पूर्ण ग्रन्थ इसी प्रकार के थे ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

नहीं पण्डितजी। प्रमाणिक इतिहास के ग्रन्थों को छोड़ उन्हों

ने नाना प्रकार की पुस्तकें बनाईं जो सम्पूर्ण संसार में प्रसिद्ध हैं। अरस्तू महा पण्डित के विद्या रूपी ग्रन्थों का वर्णन तो मैं कर चुका फिर कविता के लिखने में वे अति प्रवीण और श्रेष्ठ थे। यवनी भाषा में जो नाटक उपस्थित हैं समस्त कवीश्वरों की समझ में उस प्रकार के काव्य लिखने के लिये एक प्रसिद्ध उदाहरण ठहरते हैं और इसके सम्बन्ध में मैं एक बात वर्णन करूंगा जिस्से निष्प्रमाण वृत्तान्त और कल्पी हुई कथा की रीति प्रकट हो जायगी॥

यवन लोगों की प्राचीन काल की वही दशा थी जो मैं ने बतलाया कि आर्य्या कुल की थी और जैसी सारे गोत्रों और कुलों की पहिली दशा है क्योंकि कुलों के आरम्भ में मनुष्य थोड़े और असभ्य हैं और अपने काल के दुःखों के दूर करने में तत्पर रहते हैं इस कारण उनको विद्या प्राप्त करने का अवसर नहीं मिलता है इस दशा में वे लिखना पढ़ना बहुधा नहीं जानते और अपने वृत्तान्त का जो स्मरण वे करते हैं सो केवल मुख की कही हुई कथाओं के द्वारा से करते हैं। यही परम्परा की बात है जिसको छोड़ प्राचीन कुलों की पहिली दशा का कोई और वृत्तान्त बहुधा नहीं मिलता है। इसी अ-ज्ञानता और मूर्खता की दशा में दूसरे जाति गणों की रीति यवन लोगों ने भी अपना वही मत बनाया जिसका थोड़ासा वर्णन मैं कर चुका। पाप के कारण सच्चे परमेश्वर का तत्व ज्ञान अपने हृदय में से खोके और सम्पूर्ण सृष्टि में इस बात का प्रत्यक्ष लक्षण देखके कि हम से श्रेष्ठ कोई बड़ा सामर्थी है उन्हों ने अनेक देवताओं और देवियों की कल्पना किई। पहिले प्रकृत की शक्तियों को दैव्य जान उनकी पूजा करने लगे इसके पीछे बड़े सामर्थी मनुष्यों के चरित्र परम्परा की रीति बड़े बढ़ाव के

सङ्ग बखान कर उनको भी देवता मानने लगे। जब इस रीति से देवता गण की एक भावना संयुक्त कल्पना हुई तब मनुष्य जात उनके दर्शन और चरित्र और शक्ति के चिन्ह अपने सारे वृत्तान्तों में देखने लगे। इसके अनुसार जब भूकम्प हुआ तो उन्हों ने समझा कि देवता ने पृथ्वी को हिलाया। जब सूर्य्य ग्रहण वा चन्द्र ग्रहण था तो यह भी किसी देवता का काम ठहरा उन अज्ञानियों की यही भावना थी। इस रीति से देवता गण के चरित्र मनुष्य जात के प्राचीन वृत्तान्तों में ऐसे मिलाये गये हैं कि कोई बतला नहीं सक्ता है कि कौन बात निरे मन की कल्पना है अथवा किस वृत्तान्त में सत्यता का कोई मूल है॥

मनुष्य जात की बुद्धि की ऐसी दशा में कवीश्वर बहुधा उत्पन्न होते हैं। क्योंकि काव्य का गुण मन की भावना और कल्पना से सम्बन्ध रखता है और विद्या रूपी परीक्षा से और प्रमाणिक वृत्तान्त से भिन्न है। कोई कवीश्वर अपने कुल की सब से मन भावनी कथाओं को सङ्ग्रह करके और सामर्थ्य भर बढ़ाव के सङ्ग संवारके एक सुन्दर कविता लिखता है। इस कविता में देवता गण और जाति गण के चरित्र एक ही सङ्ग बखान करता है। कदाचित् उस कुल का कोई ऐसा सत्य वृत्तान्त बीत गया हो जो उस कविता का मूल ठहरे परन्तु यदि ऐसा भी है तथापि कोई उसको जान नहीं सक्ता है क्योंकि कविता के स्वरूप के कारण वह गुप्त हो गया और उसका कोई प्रमाण अर्थात् साक्षी क बिश्वास योग्य वचन नहीं मिलता है॥

वेदविद्वान् का वचन॥

क्या कोई ऐसी कविता जैसी आप वर्णन करते हैं यवन लोगों की बनाई हुई इन दिनों में उपस्थित है॥

सत्यार्थी का वचन ॥

पण्डितजी कितनी एक ऐसी हैं। परन्तु सब से श्रेष्ठ और प्रसिद्ध इलियड नाम है। परम्परा की रीति से इसका लिखने वाला होमर कहलाता है परन्तु इस बात का कोई यथार्थ प्रमाण नहीं मिलता है और बहुतेरे विद्यावान् जानते हैं कि उस कविता की रचना में अनेक कवियों के लक्षण देख पड़ते हैं सन्देह नहीं हैं कि उस में अनेक भिन्न २ काव्यरूपी कथाओं की एक संहिता किई गई है। एक २ कथा के कल्पने का काल कोई नहीं जानता हैं और उनके सङ्ग्रह होने का काल भी कोई नहीं जानता है क्योंकि इसके बिषय में जो परम्परा की बात होती आई हैं इसके सिद्ध करने के लिये कोई यथार्थ प्रमाण कहीं नहीं मिलता है। इसके कितने सहस्र श्लोक सुन्दर यवनी भाषा के अति मनोहर काव्य में बने हैं और उसका तात्पर्य्य एक बड़े युद्ध का वर्णन है। इस वर्णन में यवन लोगों के देवता गण के चरित्र और बड़े २ महाबीरों का यश एक ही सङ्ग बखाना जाता है और यवन लोग सनातन से मानते थे कि इसकी समस्त बातें सत्य और प्रमाणिक हैं और इसका सम्पूर्ण वृत्तान्त निश्चय और सिद्ध है। परन्तु जैसे वे प्रमाणिक इतिहास की विद्या में निपुण होते गये तैसे वे ऐसे वृत्तान्तों पर सन्देह करने लगे। निदान उनको निश्चय हुआ कि यह वृत्तान्त प्रमाणिक नहीं है केवल मन की कल्पना है। अब कोई विद्यावान् ऐसा नहीं है जो इस कविता को इतिहास की रीति प्रमाणिक और यथार्थ वृत्तान्त मानेगा परन्तु उसकी सुन्दरता की प्रशंसा सब कोई करता है॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

क्या आपकी समझ में जितना वृत्तान्त काव्य में लिखा है सब का सब असत्य और अयथार्थ है ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

पण्डितजी । मैं नहीं कहता हूं कि काव्य का कोई वृत्तान्त सत्य नहीं होसक्ता है परन्तु यह कि यदि उसका कोई और प्रमाण न हो तो केवल काव्य में लिखे जाने से कोई वृत्तान्त प्रमाणिक नहीं ठहरता है । क्योंकि काव्य का सम्बन्ध विद्या रूपी परीक्षा से अथवा प्रमाणिक इतिहास से नहीं है मनकी भावना और कल्पना से है । और उसका अभिप्राय भी सत्य वृत्तान्त का निर्णय करना नहीं है राजाओं का यश बढ़ाना और सामान्य लोगों के मन बहलाना है । अब आप बिचार कीजिये कि प्राचीन काल का वृत्तान्त जो शास्त्रों में मिलता है कैसा है और इस बिषय में दो एक बात पर जो मैं बतलाता हूं ध्यान कीजिये अर्थात् ॥

१ महाभारत और रामायण और अठारह पुराण सब के सब काव्य हैं और उनका बहुधा वृत्तान्त ठीक उसी प्रकार का है जैसी यवनी प्रसिद्ध कविता इलियड़ की है अर्थात् परम्परा को मुख से कही हुई कथाओं की संहिता है और कवि लोगों ने उन कथाओं को सङ्ग्रह करके बढ़ाव के सङ्ग अपनी बुद्धि बल के अनुसार सिंगारा है ॥

२ उनके लिखे जाने का काल स्पष्ट रूप से निर्णय नहीं होसक्ता है परन्तु निश्चय है कि वृत्तान्त के अनेक सन्तानों के पीछे उनका सङ्ग्रह हुआ इस कारण वृत्तान्त के साक्षियों का

बिश्वास योग्य और निर्णय किया हुआ वचन उन में नहीं मिलता है ॥

३ उनके कर्त्ताओं का यथार्थ समाचार कहीं नहीं मिलता है। परम्परा से तो कहा आया है कि व्यास जी महाभारत और पुराणों का कर्त्ता है परन्तु अनेक व्यासों का वर्णन भी मिलता है और कृष्णद्वैपायन और सूत आदिकों का जो वर्णन मिलता है सो निर्णय न होने से प्रमाणिक नहीं ठहरता है। फिर अनेक प्रत्यक्ष लक्षणों से जिनका थोड़ासा वर्णन मैं कर चुका सिद्ध है कि कितने पुराणों का काल बहुत नवीन है। इसी प्रकार से महाभारत के भी कितने भाग नवीन हैं। फिर जब इन सभों के भिन्न २ काल साक्षात् हैं तो उनका एक ही कर्त्ता किस प्रकार से सम्भव हो सक्ता है ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

आपने तो पहिले कहा था कि वेद की संहिता बहुत प्राचीन है फिर जो वर्णन आप इस समय करते हैं यदि सत्य भी हो तो उस्से वेदों पर क्या आपत्ति लगती है ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

मैं ने तो निस्सन्देह पण्डितजी मान लिया है कि वेद के सूक्त और उनकी संहिता दोनों बहुत प्राचीन काल के हैं उन को तीन सहस्र बर्ष से न्यून न हुए होंगे। परन्तु इस्से उनका ब्रह्मा के मुख से निकलना अथवा ईश्वरावेश से होना सिद्ध नहीं होता है। मैं तो सिद्ध करचुका हूं कि सूक्तों में ईश्वरवाणी होने का कोई लक्षण देख नहीं पड़ता है। यह भावना तो बहुत काल के पीछे जब सूक्त कर्त्ताओं का सत्य वृत्तान्त निर्णय नहीं

हो सका उत्पन्न हुए और इस भावना के उत्पन्न होने की रीति भी मैं ने बतलाई अर्थात् कि यज्ञ करने के समय पुरोहितों ने उन सूक्तों के उच्चारण करने से बड़ी प्रतिष्ठा प्राप्त किई और अन्त को ब्राह्मण का बिशेष बर्ण स्थापित हुआ। फिर जब ब्राह्मणों ने उन सूक्तों की महिमा बढ़ाने के लिये उनका और उनके कर्त्ताओं का ऐसा वृत्तान्त लिखा जैसा ऋषियों और मुनियों का वृत्तान्त शास्त्रों में मिलता है तो अनेक कारण हैं जिन से यह वृत्तान्त प्रमाणिक नहीं हो सक्ता है अर्थात् ॥

१ इस वृत्तान्त के कर्त्ता अर्थात् ब्राह्मण इस प्रकरण में निरभिप्राय और निर्पक्ष नहीं थे ॥

२ उनकी सामर्थ्य न थी कि इतने सन्तानों के पीछे ऋषियों का सत्य वृत्तान्त निर्णय करें ॥

३ सामान्य लोगों की भी जब उन्हों ने यह वृत्तान्त सुन लिया तो इसके निर्णय करने की सामर्थ्य न थी ॥

४ यदि सामान्य लोगों को यह सामर्थ्य भी होती तथापि ऐसा करने से वे बहुत डरते। क्योंकि ब्राह्मणों के वचन पर जो कोई कुछ सन्देह करता तो वह पाषण्डी ठहरता और उस काल ब्राह्मण प्रबल थे ॥

५ ऋषियों और मुनियों का जो वृत्तान्त शास्त्रों में मिलता है उसके सिद्ध करने के लिये कोई ग्रन्थ जो वेदों के काल का हो कहीं नहीं मिलता है। अर्थात् साक्षी का बिश्वास योग्य वचन न मिलने के कारण वह वृत्तान्त किसी प्रकार से सिद्ध और प्रमाणिक नहीं हो सक्ता है। मैं आप से पूछता हूं कि मुनियों और ऋषियों के दैव्य चरित्रों का वृत्तान्त जो उनकी मृत्यु से सहस्रों बर्ष पीछे लिखा गया किस प्रकार से प्रमाणिक और बिश्वास योग्य हो सक्ता है ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

क्या आपने नहीं कहा कि यद्यपि कोई वृत्तान्त प्रमाणिक न ठहरे तथापि कदाचित् सत्य होवे सो ऋषियों का जो वृत्तान्त शास्त्रों में मिलता है यदि मैं ग्रहण भी करूं कि प्रमाणिक नहीं है तो आप किस प्रकार से सिद्ध करेंगे कि अयथार्थ और मिथ्या है ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

कितने वृत्तान्त जो प्रमाणिक नहीं ठहर सक्के फिर भी कदाचित् सत्य होवें यह बात पण्डितजी मैं ने तो कही है परन्तु ऐसे वृत्तान्त के निर्णय करने के लिये कि सम्भव है कि नहीं दूसरे विषयों से अनुमान करना अवश्य है। इस रीति से मैं शास्त्रों के भी दो एक वृत्तान्त जैसे आर्य्या कुल की पहिली दशा विशेष वर्णों का स्थापन होना इत्यादि सम्भव बतलाया क्योंकि मैं ने उनके सिद्ध करने के लिये दूसरे बिषयों से अनुमान किया इसी प्रकार से किसी निष्प्रमाण वृत्तान्त की मिथ्यता भी सिद्ध हो सक्ती है क्योंकि मिथ्या वृत्तान्तों का एक विशेष लक्षण है कि आपस में बिरुद्ध हैं और इसी लक्षण से अनुमान करके हम कहते हैं कि ऋषियों और मुनियों का जो वृत्तान्त शास्त्रों में मिलता है सो केवल निष्प्रमाण नहीं बरन उसकी मिथ्यता प्रत्यक्ष है। बिश्वामित्र भारद्वाज वशिष्ठ अत्रि पाराशर आदिक समस्त मुनियों का वृत्तान्त मैं इस समय नहीं कह सक्ता हूं परन्तु एक अर्थात् वशिष्ठ का थोड़ा वर्णन करूंगा ॥

विष्णु पुराण का कर्त्ता कहता है कि ब्रह्मा के भृगु आदि नव मानसिक पुत्र थे उन में से वशिष्ठ एक था महाभारत का

कर्त्ता एक स्थल में कहता है कि ब्रह्मा के सात पुत्र थे और बशिष्ठ सातवां था। फिर महाभारत के दूसरे स्थल में ब्रह्मा के पुत्रों में वशिष्ठ का नाम नहीं आता है परन्तु दक्ष सातवां पुत्र कहा है। जैसा॥

ब्रह्मानु ससृजे पुत्रान् मानसान् दक्षसप्तमान्।
मरीचिमत्र्यङ्गिरसं पुलस्त्यं पुलहं क्रतुम्॥

अर्थात् ब्रह्मा ने मरीचि अत्रि अङ्गिरस् पुलस्त्य पुलह और क्रतु ये छह मानस पुत्र उत्पन्न किये और सातवां दक्ष॥

वायु पुराण से जान पड़ता है कि ये सात पुत्र सप्तर्षि कहलाते थे। जैसा॥

भूयः सप्तर्षयस्त्वेव उत्पन्नाः सप्त मानसाः
पुत्रत्वे कल्पितास्त्वेव स्वयमेव स्वयम्भुवः॥

अर्थात् फिर सात सप्तर्षि ब्रह्मा के मन से उत्पन्न हुए और उसने उनको पुत्र करके माना॥

फिर पद्म पुराण में वशिष्ठ का नाम नहीं आता है उसके बदले कर्दम लिखा है। मत्स्य में ब्रह्मा के दश पुत्र भागवत में नव कूर्म में बारह लिङ्ग में चौदह लिखे हैं। फिर भागवत आदि पुराणों में कहा है कि मरीचि को छोड़ सब और पुत्र ब्रह्मा के शरीर से उत्पन्न हुए। जैसे भागवत के तीसरे स्कन्ध के बारहवें अध्याय में लिखा है॥

अथाभिध्यायतः सर्गं दश पुत्राः प्रजज्ञिरे
भगवच्छक्तियुक्तस्य लोकसन्तानहेतवः॥२१॥
मरीचिरत्र्यङ्गिरसौ पुलस्त्यः पुलहः क्रतुः
भृगुर्वशिष्ठो दक्षश्च दशमस्तत्र नारदः॥२२॥
उत्सङ्गान्नारदो जज्ञे दक्षोऽङ्गुष्ठात् स्वयम्भुवः
प्राणाद्वशिष्ठः सञ्जातो भृगुस्त्वचि करात् क्रतुः॥२३॥

पुलहो नाभितो जज्ञे पुलस्त्यः कर्णयोर्ऋषिः
अङ्गिरा मुखतोऽक्ष्णोऽत्रिर्मरीचिर्मनसोऽभवदिति ॥ २४ ॥

अर्थात् जब ब्रह्मा ने जो भगवान् की शक्ति रखता था सृष्टि करने का ध्यान किया तब दश पुत्र उत्पन्न हुए जो संसार के वंश के कारण थे। वे ये हैं। मरीचि अत्रि अङ्गिरस पुलस्त्य पुलह क्रतु भृगु वशिष्ठ और दक्ष उन में दशवां नारद है। ब्रह्मा की जांघ से नारद उत्पन्न हुआ और अंगूठे से दक्ष प्राण से वशिष्ठ हुआ त्वचा से भृगु और हाथ से क्रतु नाभि से पुलह हुआ और कानों से पुलस्त्य ऋषि मुख से अङ्गिरस नयनों से अत्रि और मन से मरीचि हुआ ॥

परन्तु लिङ्ग पुराण की कथा में इस्से बड़ा भेद है क्योंकि इसके अनुसार अत्रि उसके कानों से और मरीचि उसकी आंखों से उत्पन्न हुए। भागवत में वशिष्ठ की स्त्री अरुन्धती परन्तु विष्णु पुराण में ऊर्जा कही है। फिर विष्णु पुराण में लिखा है कि वशिष्ठ के सात पुत्र रजोगात्र ऊर्द्धबाहु इत्यादि थे। परन्तु भागवत में उनके नाम चित्रकेतु आदि हैं। शास्त्रों में वशिष्ठ का जो वृत्तान्त है सो इस प्रकार की अद्भुत और बहुरूपी परस्पर विरुद्धता से परिपूर्ण है ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

तो क्या आपकी समझ में वशिष्ठ का सम्पूर्ण वृत्तान्त जो शास्त्रों में मिलता है सर्वथा मिथ्या है ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

मैं नहीं कहता हूं कि पूर्व काल में एक मनुष्य नहीं था किसी राजा का पुरोहित और वैदिक सूक्तों का कर्त्ता जिसका

नाम वशिष्ठ था। यह नाम तो सूक्तों में आता है उन सूक्तों का कोई कर्त्ता हुआ होगा और कदाचित् उस कर्त्ता का नाम वशिष्ठ होगा इस में कुछ असम्भव अथवा बिरुद्ध बात नहीं है और यह भी सम्भव है कि उसके सन्तान में कितने पुरोहित वैदिक सूक्तों के कर्त्ता पूर्व काल में विख्यात हुए होंगे परन्तु उसका ब्रह्मा के पुत्र होने का इत्यादि जो वृत्तान्त पुराणों में लिखा है सो निस्सन्देह सर्वथा प्रलाप है और उस वृत्तान्त की उत्पत्ति अज्ञानता अथवा छल से हुई। जिन मनुष्यों ने भारत-खण्ड में वेदों का मत चलाया और उसके द्वारा अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाई उन्हों ही ने सूक्त कर्त्ता ऋषियों को ब्रह्मा के पुत्र ठहराये परन्तु यदि वे सचमुच ब्रह्मा के पुत्र होते तो पुराणों में उनका वृत्तान्त क्योंकर ऐसा बिरुद्ध हो सक्ता इस्से साक्षात् है कि एक २ पुराणकर्त्ता ने जैसा उसके मन में आया वैसा अपना वृत्तान्त लिखा आप बिचार कीजिये कि ऐसा वृत्तान्त सत्य है कि असत्य ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

आप तो फिर बिरुद्धता के कारण शास्त्रों पर आपत्ति लगाते हैं। मैं ने पहिले कहा था कि जो आपकी समझ में बिरुद्ध देख पड़ता है सो सचमुच बिरुद्ध नहीं है और अब वेद अनुक्रमणिका के कर्त्ता का एक वचन मेरे चित्त में आता है जिस में यह सिद्धान्त स्पष्ट रूप से कहा है अर्थात् कि भिन्न नामों से केवल एक ही ब्रह्मा का अर्थ है। जैसा ॥

तिस्र एव देवताः क्षित्यन्तरिक्षद्युस्थाना अग्निर्वायुः सूर्य्य इति ॥ एवं व्याहृतयः प्रोक्ता व्यस्ताः समस्तानां प्रजापतिः ॥ ओङ्कारः सार्वदेवत्यः पारमेष्ठ्यो ब्राह्मो दैवो वा अध्यात्मिकः ॥

तत्तत्स्थाना अन्यास्तद्विभूतयः कर्मपृथक्त्वाद्धि पृथगभिधानस्तुतयोभवन्ति ॥ एकैव वा महानात्मा देवता ॥ स सूर्य्य इत्याचक्षते स हि सर्वभूतात्मा ॥ तदुक्तमृषिणा सूर्य्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्चेति तद्विभूतयोऽन्या देवता: ॥ तदप्येतदृषिणोक्तम् इन्द्रम् मित्रं वरुणमग्निमाहुरिति ॥

अर्थात् तीन ही देवता हैं अग्नि वायु और सूर्य्य जो पृथिवी आकाश और स्वर्ग में वास करते हैं। व्याहृति अर्थात् भूः भुवः स्वः में से एक २ के देवता हैं और यह तीनों मिलके प्रजापति देवता हैं। ओङ्कार के सब देवता हैं अथवा परमेष्ठी ही उसका देवता अथवा ब्रह्मा अथवा देव अथवा अन्तरात्मा उसका देवता है। और सब देवता जो अपने २ स्थान में रहते हैं वे उसी की बिभूतियां हैं केवल कर्मों के भिन्न २ होने से उनके भिन्न २ नाम हैं और पृथक् २ स्तुति हैं। अथवा एक ही परमात्मा सब का देवता है। और कहते हैं कि वह सूर्य्य है क्योंकि वह भूतों का आत्मा है। जैसा कि ऋषि ने कहा है कि सूर्य्य सब चराचर का आत्मा है और सब देवता उसी की बिभूति हैं यह भी ऋषि ने कहा है एक ही को इन्द्र मित्र वरुण इत्यादि कहते हैं ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

पण्डितजी। आप कहते हैं कि इन्द्र आदिक एक ही परमेश्वर की बिभूति हैं और वेद में भी इस बिषय में एक मन्त्र देख पड़ता है परन्तु यह उत्तर ठीक नहीं है क्योंकि सूर्य अग्नि वायु इत्यादि सचमुच केवल जड़ पदार्थ हैं जिन्हें ईश्वर ने मनुष्य आदिकों के उपयोग के लिये बनाया है और मनुष्य केवल भ्रान्ति से उनको देव करके मानने लगे तो ऐसे

जड़ पदार्थों को किस प्रकार से ईश्वर की बिभूति मान सकेंगे और उनके पूजने से क्या लाभ है। और यदि कहिये कि सूर्य्य आदिकों के अधिष्ठाता कोई देवता होते हैं तो इसका कुछ प्रमाण नहीं है इसलिये ऐसे देवताओं की पूजा उचित नहीं हो सकी। फिर इन्द्र आदिकों के ऐसे चरित्र लिखे हुए हैं जो कभी ईश्वर के योग्य नहीं हो सक्के। पुराणों में तो अनेक नीच और पाप युक्त बातें उनके बिषय में लिखी हैं और उनके आपस में एक दूसरे से झगड़ने का भी बहुत वर्णन है तो क्या वे एक ईश्वर की बिभूति हो सक्ती हैं। इसी प्रकार से जो आपने पहिले भी कहा कि शैव और वैष्णव पुराणों में सचमुच बिरुद्धता नहीं है इसके बिषय में मैं आप से पूछता हूं कि यदि यह बिरुद्धता नहीं है तो पण्डितजी बिरुद्धता किस प्रकार की बस्तु है। आपको तनिक भी सन्देह करना नहीं चाहिये कि जो वाद विवाद शैव और वैष्णव आपस में करते थे सो कुछ देखने का झगड़ा नहीं था एक सत्य झगड़ा था क्योंकि एक २ अपने इष्ट देवता की प्रशंसा यत्न से कर दूसरे देवता की और उसके पूजकों की निन्दा करता और श्राप देता था। जब पुराण के कर्त्ता आप इसको एक वृथा और निष्फल झगड़ा नहीं मानते थे तो हम इसको व्यर्थ क्योंकर मानें। इस दशा में यदि शैव मत सत्य है तो वैष्णव सत्य होगा और यदि वैष्णव सत्य है तो शैव असत्य होगा। परन्तु हे मित्र सत्य बात यह है कि ये दोनों मत भ्रान्ति से उत्पन्न हुए इस में कुछ सन्देह नहीं है॥

वेदविद्वान् का वचन॥

युवा अवस्था से मैं ने अपने देश के शास्त्रों का बड़ा सन्मान किया है क्योंकि मैं ने ऐसा समझा कि ये बड़े २ ऋषियों से

उच्चारे गये हैं और इन में धर्म्म का मार्ग जिस पर साधु लोग सनातन से चले आये हैं और मुक्ति का सत्य उपाय भी बतलाया जाता है ऐसे शास्त्रों के खण्डन करने के प्रमाण सुन्ने से मुझ को बड़ा दुःख होता है फिर भी आपको द्वेष रहित और सत्यार्थी जान मैं ने आपका वर्णन सुन लिया है। क्या इस प्रकरण में आप और कुछ कहने चाहते हैं कि नहीं ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

कुछ आश्चर्य्य की बात नहीं है कि मेरा वर्णन सुनने से आपका मन खेदित होवे। मनुष्य का स्वभाव ऐसा है कि जब कोई अन्य पुरुष उस विषय का जिस्से हम बहुत काल से आनन्दित हो रहे हैं दोष बतलाता है तो मन मलीन हो जाता है और बिशेष करके अपने पितरों के धर्म्म में तत्पर हो कोई जन उसके खण्डन होने से प्रसन्न नहीं है। पहिले से मैं ने इस बात को जान रक्खा है और इस कारण से निन्दापूर्वक अथवा खेदजनक वचन कहना मैं ने सामर्थ भर छोड़ दिया है परन्तु आप भी मेरे समान मान लेते हैं कि धर्म्म में जो सब से भारी प्रकरण है सत्य बात निर्णय करना अति अवश्य है इस कारण आपकी इच्छा हो तो कल प्रातःकाल को हम फिर सत्सङ्ग करेंगे और जितना प्रमाण और चर्चा रह गई है उस में मैं सामर्थ भर कोमल और उचित और प्रेमपूर्वक वचन कहूंगा ॥

ग्रन्थकर्त्ता का वचन ॥

इस पर हम तीनों मनुष्य प्रणाम कर बिदा हुए और अपने २ घर को सिधारे ॥

मतपरीक्षा का छठा सत्सङ्ग समाप्त हुआ ॥

इति ॥

सातवां सत्सङ्ग॥

ईश्वरीय शास्त्र की शिक्षा की चर्चा॥

ग्रन्थकर्त्ता का वचन॥

दूसरे दिन आगे की रीति प्रातःकाल को हम तीनों मनुष्य उसी स्थान पर उपस्थित थे और मैं ने देखा कि वेदविद्वान् का मुख किसी कारण से बड़ा आनन्दित देख पड़ता है उसके नेत्र हर्ष से चमकते थे और उसका सारा स्वरूप आल्हाद से परिपूर्ण था। यह दशा देख सत्यार्थी कहने लगा कि आज के दिन आप बड़े मगन देख पड़ते हैं आसरा है कि आगे के सम्वादों के अभिप्राय पर ध्यान करके ईश्वर के अनुग्रह से आपका मन सन्तुष्ट होने लगा। इस पर वेदविद्वान् ने कहा कि नहीं पण्डित जी मेरे हर्ष का कारण यह नहीं है बात यह है कि आज मैं ने अपने एक आत्मीय मित्र की ओर से एक अति सुन्दर पत्र पाया है इस कारण से मैं अत्यन्त प्रसन्न हूं क्योंकि मेरा मित्र एक बड़ा गुणवान् पुरुष है और उसके पत्र में ऐसी ज्ञान पूर्वक और गुणदायक बातें लिखी हैं कि जिन से मेरा जी बड़ा सन्तुष्ट हुआ और मेरे अन्तःकरण का प्रेम जो उस पर लगा था निपट बढ़ गया है। तब सत्यार्थी कहने लगा॥

सत्यार्थी का वचन॥

आपके इस विवर्ण से मुझको एक ठीक और यथार्थ औसर मिलता है कि उस बात को जिसकी चर्चा मैं इस समय करने चाहता हूं आपके सन्मुख बतलाऊं क्योंकि जो आप प्रसन्न हों तो मेरी इच्छा है कि ईश्वर के प्रत्यक्ष गुणों पर ध्यान कर हम

दोनों इस सत्सङ्ग में बिचारें कि ऐसे ईश्वर का कौनसा शास्त्र योग्य होगा अर्थात् ईश्वरीय मत की शिक्षा ईश्वर के योग्य होने के लिये कैसी चाहिये ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

यह तो पण्डितजी एक बहुत अच्छा बिषय है जिस पर बुद्धिमान् और सत्यार्थी भली भांति ध्यान करें। परन्तु इसके आरम्भ में मैं आप से मन खोलके कहता हूं कि आपका जो वर्णन पहिले सम्वादों में हो चुका है उसके अभिप्राय से मेरे मन में सन्देह है कि कदाचित् इसके तात्पर्य्य से भी हिन्दू शास्त्रों को खण्डन करना होगा। इस कारण से कुछ आश्चर्य्य नहीं है कि एक प्रकार की चिन्ता मेरे अन्तःकरण में रहती है। फिर भी मैं आपका वर्णन सुनने पर सिद्ध हूं क्योंकि यदि सत्य हो तो जैसे मेरे मित्र ने अपने पत्र में लिखा है सत्य बात के सुनने से किसी प्रकार की हानि नहीं हो सक्ती है और यदि असत्य हो तो इस बात के निर्णय और प्रकाश करने से बड़ा लाभ होगा परन्तु पहिले आपको उचित है कि परमेश्वर के प्रत्यक्ष गुणों का तनिक वर्णन कीजिये और इसके पीछे ईश्वरीय मत की योग्य शिक्षा बतलाइये ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

परमेश्वर के प्रत्यक्ष गुणों का जो वर्णन मैं करता हूं आप सुनिये ॥

सम्पूर्ण सृष्टि पर ध्यान करने से सिद्ध है कि परमेश्वर अनादि असीम अनन्त निराकार पवित्र मय सर्वज्ञानी सर्व सामर्थी और दयावान् है। उसी ने इस बहुरूपी जगत स्थिर और अस्थिर

को सिरजा वही उसको सदा पालन करता है और अपनी सिरजी हुई प्रजाओं के ऊपर धर्म्म का राज्य करता है। पण्डितजी अपनी प्रजाओं के कर्मों को देख यह संसार का स्वामी प्रमाद नहीं करता है यद्यपि रागद्वेष आदिकों से रहित तो है तथापि बुरे भले कर्मों पर अथवा बुरे भले मनुष्यों पर सामान्य दृष्टि से ध्यान नहीं करता है परन्तु पाप पुण्य का बिचार कर निर्पक्ष हो उनको योग्य प्रतिफल देता है। इस रीति से सिद्ध है कि वह सुकर्मियों से प्रसन्न और कुकर्मियों से अप्रसन्न है। मनुष्य के कर्मों का न्याय कर इसी जगत में भी वह उनका कुछ प्रतिफल देता है परन्तु परलोक में उनका यथार्थ और सम्पूर्ण प्रतिफल देगा क्योंकि यद्यपि परमेश्वर इस लोक में कुकर्मियों से बड़ा धीरज करता है तथापि परलोक में उनको योग्य दण्ड देगा। क्या आपकी बुद्धि में परमेश्वर का यह वर्णन यथार्थ और योग्य है कि नहीं॥

वेदविद्वान् का वचन॥

पण्डितजी। आपके वर्णन पर मैं कुछ दोष नहीं लगा सक्ता हूं क्योंकि मेरी समझ में वह ठीक है इस कारण आप आगे बढ़के बतलाइये कि इस वर्णन के अनुसार ईश्वरीय शास्त्र की कैसी शिक्षा चाहिये॥

सत्यार्थी का वचन॥

ईश्वरीय शास्त्र का प्रसिद्ध लक्षण यह है कि उस में ऐसे २ गुण देख पड़ेंगे जैसे ईश्वर के प्रत्यक्ष गुण हैं क्योंकि समस्त जातें क्या दैविक क्या लौकिक अपने २ निज गुण और स्वभाव के अनुसार कार्य्य करते हैं अर्थात् अपने स्वभाव के विरुद्ध कुछ नहीं कर सक्ते हैं। इस रीति से जब किसी कर्त्ता का कार्य्य

साक्षात् है तो उस कार्य्य के गुण से कर्त्ता का गुण भी जाना जाता है फिर जब कर्त्ता का गुण प्रत्यक्ष है तो इससे अनुमान हो सक्ता है कि कोई कार्य्य उसका है कि नहीं परन्तु अपना अर्थ स्पष्ट रूप से खोलने के लिये मैं एक लौकिक दृष्टान्त लाऊंगा आप सुनिये ॥

पूर्व काल में मगध देश का एक भूपति था जिसका नाम सत्यसिंह था। वह एक बड़ा दयावान् धर्म्मी विवेकी विश्वासी और अपनी प्रजाओं का पालन करता था। उसका बड़ा बेटा रूपसिंह नाम था। पहिले अपने पास घर पर कुछ विद्या पढ़ाके पीछे पिता ने उसको अधिक शिक्षा पाने के लिये काशी में भेजा परन्तु जिस्सें बुरी सङ्गति से भ्रष्ट न हो पिता ने उसको नाना प्रकार का ज्ञान पूर्वक उपदेश किया। घर को छोड़ वाराणसी में पहुंच रूपसिंह एक पण्डित के पास विद्या प्राप्त करने में तत्पर रहा ॥

कितने दिनों के पीछे कितने एक दुष्ट जनों ने जो सत्यसिंह के शत्रु थे उसके धन और भाग्यवानी को देख डाह से मोहित हो उसको दुःख देना चाहा। इन दुष्टों ने यह जान कि वह अपने पुत्र को बहुत प्यार करता है उसके बिगाड़ने का यही उपाय रचा सत्यसिंह की छाप के सदृश एक मिथ्या छाप बना के उन्हों ने उसके पुत्र के पास एक कृत्रिम पत्र भेजा। इस में अनेक माया संयुक्त मिथ्या परामर्ष दे उन्हों ने रूपसिंह के मन को दुष्टता की ओर बहकाया। जैसे हे प्यारे पुत्र युवा अवस्था में काम आदि शरीरी अभिलाषों को रोकना न चाहिये इत्यादि ऐसी २ बातें इस पत्र में लिखी थीं। जब वह तरुण विद्या के प्राप्त करने में तत्पर था तब यह पत्र किसी दूत के हाथ से उसके पास पहुंचा ॥

पहिले रूपसिंह ने उस दूत के कपटी वचनों से धोखा खाया और यह जाना कि पत्र मेरे पिता से आया है बड़े आनन्द के साथ उसको ग्रहण किया परन्तु जब ध्यान करके उसके तात्पर्य्य को देखा तो तुरंत उसके मन में सन्देह आया कि मेरा भला पवित्रमय ज्ञानी और दयावान् पिता सम्पूर्ण रूप से मेरी सत्य भलाई को नित्य चाहता है मेरे बिदा होने के समय उसने मुझे बार २ समझाया कि हे मेरे प्यारे पुत्र वेश्याओं की सङ्गति से सदा अपने को दूर रख। मेरा पिता ऐसा गुणवान् हो मेरी चाल बिगाड़ने के लिये ऐसा बुरा परामर्ष जो इस पत्र में लिखा है किस प्रकार से लिख सक्ता। मुझको निश्चय ज्ञान है कि मेरे पिता ने इस दुष्टतामय पत्र को कधी नहीं लिखा होगा मेरे किसी शत्रु ने यह किया है। यह कहके उस तरुण ने उस दूत से जो पत्र लाया था पूछा कि मुझे तो बता तू ने किसके हाथ से यह पत्र पाया। इतनी बात सुन उस दूत ने कहा कि आपके पिता के हाथ से उसी के घर में मैं ने यह पाया। परन्तु जब रूपसिंह ने उस दूत के मुख से फिर दृष्टि लगाई तो उसको चेत हुआ कि यह मनुष्य तो मेरे पिता के शत्रु का सेवक है मैं ने पहिले इसको देखा है इस बात का स्मरण कर वह तरुण निश्चय जान गया कि यह पत्र मेरे पिता का नहीं परन्तु उसके शत्रुओं का भेजा हुआ है॥

इसके थोड़े दिनों के पीछे रूपसिंह ने एक सच्चा पत्र अपने पिता के एक सेवक के हाथ से पाया। उस सेवक को बिश्वासी सत्य पुरुष जान उसने बेधड़क उसके वचन पर बिश्वास किया फिर जब उस पत्र को पढ़ लिया तो देखा कि योग्य और गुण दायक परामर्ष लिखा है। इस रीति से उस तरुण को दो प्रमाणों से निश्चय हुआ कि यह पत्र निस्सन्देह मेरे पिता का भेजा

हुआ है पहिले उस दूत को पहिचाना कि सच्चा विश्वस्त मेरे पिता का सेवक है निश्चय करने का एक प्रमाण यह था। दूसरा उसने उस पत्र के अभिप्राय को अपने पिता के धर्म्ममय और पवित्र स्वभाव के समान पाया किसी बात में उसके बिरुद्ध नहीं पाया सो यह निश्चय करने का दूसरा प्रमाण था ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

आपने तो एक बहुत अच्छा दृष्टान्त कहा है अब ईश्वरीय शास्त्र की परीक्षा करने में इसको किस प्रकार से लगावेंगे ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

पण्डितजी। जिस प्रकार से उस तरुण ने उस दूत की जो पहिला पत्र लाया था परीक्षा करके देखा कि यह मेरे पिता का सेवक नहीं है उसके शत्रु का सेवक है उसी प्रकार से हमको चाहिये कि शास्त्र के कर्त्ताओं की परीक्षा करके देखें कि वे कौन और कैसे थे और किन प्रमाणों से वे सिद्ध करते हैं कि ईश्वर के सच्चे दूत हैं। सो इस बात का निर्णय अगिले सम्वाद में हम कुछ थोड़ासा कर चुके हैं और उस परीक्षा से यह परिणाम सिद्ध हुआ कि वेद आदि शास्त्रों के कर्त्ताओं के कुछ प्रमाणिक वृत्तान्त नहीं मिलते हैं परन्तु जितना उनके बिषय में अनुमान की रीति सम्भव हो सक्ता है सो यह है कि उन्हों ने केवल अपनी दोषमान् बुद्धिमात्र से उन शास्त्रों को बनाया ईश्वर के दैवीय दूत होने का कोई लक्षण उन में पाया नहीं जाता है ॥

फिर जिस रीति से उस तरुण को उन दो पत्रों के तात्पर्य्य की परीक्षा से निश्चय हुआ कि पहिला पत्र तो मेरे पिता का

नहीं हो सक्ता है परन्तु दूसरा पत्र निस्सन्देह उसका लिखा हुआ होगा । उसी रीति से हमको भी उचित है कि शास्त्र के तात्पर्य्य की परीक्षा करें क्योंकि सच्चा शास्त्र एक पत्र के तुल्य है जिसको हमारा स्वर्गीय पिता परमेश्वर हमारे पास भेज देता है । उस युवा ने पहिले पत्र के बिषय में सत्य बिचार किया कि मेरे पवित्र मन पिता का एक ऐसे दुष्ट अभिप्राय का पत्र मेरे पास भेजना मेरी बुद्धि में एक अनहोनी बात है। अब इसी रीति से वेद आदि शास्त्रों के तात्पर्य्य और शिक्षा को जांचके देखना चाहिये कि वे ईश्वर के प्रत्यक्ष गुण के समान हैं कि नहीं । इस समय तो बड़े बिस्तार के साथ इसकी चर्चा नहीं कर सक्ते हैं परन्तु दो एक प्रसिद्ध बातों का तनिक बिचार करेंगे ॥

पहिले आप मान लेते हैं कि परमेश्वर दयावान् है उसकी दया और कृपा के लक्षण सम्पूर्ण सृष्टि में देख पड़ते हैं क्योंकि वह सारे जीव धारियों का प्रतिपालन नित्य करता है । फिर यद्यपि उसके कार्य्यों पर ध्यान करने से यह बात निश्चय भी नहीं होती तथापि बुद्धि की शिक्षा से हम जान सक्ते हैं कि निस्सन्देह वह प्रेम का सागर है । क्योंकि परमेश्वर होके अवश्य निर्दोषी होगा परन्तु जिसके स्वभाव में प्रेम नहीं है वह निर्दोषी क्योंकर हो सक्ता है फिर वह सारे मनुष्य जातों का पिता भी है क्योंकि उसी की सामर्थ्य और युक्ति से हम सब के सब जन्म पाते हैं और उसकी दया समस्त जाति गणों के ऊपर है । अब समस्त जाति गणों का दयावान् और प्रेमी पिता होके निस्सन्देह उसकी इच्छा होगी कि सारे मनुष्य आपस में प्रेम रक्खें । वह कैसा पिता होगा जो अपने पुत्रों के बीच द्वेष और बिरुद्धता और झगड़ा पालन करे ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

आपका वर्णन ठीक है निस्सन्देह सारे मनुष्यों को चाहिये कि इसी रीति से आपस में प्रेम रक्खें ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

फिर पण्डितजी जो यह दशा है तो मैं आप से पूछता हूं कि वह शास्त्र जिस में विशेष वर्ण का व्यवहार स्थापित होता है उस प्रेमी पिता का शास्त्र क्योंकर हो सक्ता है अथवा वह शास्त्र जो मनुष्य की किसी एक जात को समस्त और जातों से भिन्न कर देता है और सम्पूर्ण अन्य जातियों को अशुद्ध ठहराता है और उनके संग प्रेम का व्यवहार रखना वर्जित करता है ऐसा शास्त्र उस प्रेमी और दयावान् परमेश्वर का क्योंकर हो सक्ता है। मैं तो जानता हूं कि पापमय मनुष्य आपस में द्वेष और डाह करते हैं और अनेक बातों से जैसे भिन्न देश और भाषा और रीति इत्यादि से आपस में द्वेष करने का कारण वृथा उत्पन्न करते हैं परन्तु यह तो उनकी अज्ञानता और मूर्खता है कुछ ईश्वर की इच्छा के समान नहीं है इसी प्रकार से विशेष वर्ण भी जो द्वेष और अभिमान और झगड़े का सब से बड़ा कारण है ईश्वर की इच्छा के समान नहीं हो सक्ता है और वह शास्त्र भी जिस में इस बात की आज्ञा है यदि और कोई प्रमाण भी न होता तथापि इसी प्रमाण से निश्चय है कि वह ईश्वर का शास्त्र नहीं हो सक्ता है क्योंकि ऐसी आज्ञा उसके प्रत्यक्ष गुणों के ठीक विरुद्ध है ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

आपने पहिले कहा था कि विशेष वर्ण कुछ स्वाभाविक अथवा प्रकृत संयुक्त वस्तु नहीं है। केवल मनुष्य की रचित

बात है। अब आप कहते हैं कि ईश्वर की इच्छा के बिरुद्ध है ऐसा जान पड़ता है कि आपकी समझ में उस्से कुछ लाभ नहीं निकलता है॥

सत्यार्थी का वचन॥

पण्डितजी। मेरी समझ में लाभ के बदले उस्से अनेक प्रकार की हिंसा उत्पन्न होती हैं बरन यही एक बिशेष कारण है जिस्से इन दिनों के हिन्दू पूर्ब काल के हिन्दुओं से निर्बल और अज्ञान और विद्याहीन हो गये परन्तु यद्यपि उस्से कुछ संसारिक लाभ भी निकलता तथापि जब उसका धातु अर्थ निरा अभिमान और द्वेष है तो एक प्रेमी परमेश्वर की आज्ञा नहीं हो सक्ती। अब हम इस बात को छोड़ एक दूसरे बिषय की चर्चा करते हैं अर्थात्॥

परमेश्वर एक है और उसको छोड़ कोई दूसरा ईश्वर नहीं है और नहीं हो सक्ता इस कारण से वही अकेला भजन के योग्य है क्योंकि अपने ईश्वरत्व ही के हेतु से वह भजन के योग्य है और जब कि कोई दूसरा परमेश्वर नहीं है तो कोई दूसरा भजन के योग्य नहीं हो सक्ता। सो मैं फिर आप से पूछता हूं कि वह शास्त्र जिस मे अनगणित देवताओं के भजन करने की और प्रतिमा बनाके उनकी पूजा करने की आज्ञा मिलती है सो अकेले सच्चे परमेश्वर का शास्त्र क्योंकर हो सक्ता है। ऐसी भावना तो परमेश्वर के ईश्वरत्व और उसकी सत्यता के बिरुद्ध है क्योंकि यदि परमेश्वर ऐसी आज्ञा करता तो अपने को छोड़ किसी दूसरे को ईश्वर ठहराता। परन्तु मैं वर्णन कर चुका हूं कि वेद आदि शास्त्रों में अनेक देवताओं के भजन करने की आज्ञा है। सृष्टि के तत्व प्रकृति की शक्ति जड़ पदार्थ

पराक्रमी मनुष्य जीव जन्तु बनस्पति धातु बिशेष अनेक बस्तुओं का ऐसा वर्णन शास्त्रों में मिलता है कि इनका भजन करना योग्य और उचित है। ऐसी बातों पर ध्यान करने से मुझे निश्चय है कि वह शास्त्र परमेश्वर का शास्त्र नहीं हो सक्ता है क्योंकि ये बातें उसके प्रत्यक्ष गुण के ठीक बिरुद्ध हैं॥

वेदविद्वान् का वचन॥

आप तो क्या बिचार नहीं करते हैं कि प्रतिमा आदि पदार्थों की पूजा करने का क्या अर्थ है उसका अर्थ यह है कि उन की सहायता से पूजकों का मन ईश्वर ही पर स्थिर रहता है और उनकी पूजा करके ईश्वर ही का भजन करते हैं। फिर देवता गण का भजन करना इस कारण से उचित और योग्य है कि ये परमेश्वर के अवतार अर्थात् आप ही परमेश्वर हैं सो जब उनका भजन करते तो ईश्वर ही का भजन करते हैं॥

सत्यार्थी का वचन॥

आप जो प्रतिमा आदि पदार्थों का वर्णन करते हैं सो इसका उत्तर यह है कि सामान्य लोग उनको सचमुच ईश्वर मानते हैं बरन शास्त्रों में भी लिखा है कि जब ब्राह्मण के मन्त्र से स्थापन हुए तो ईश्वर आप उनमें व्याप्त हुआ है फिर यद्यपि शास्त्र में ऐसा लिखा भी न होता तथापि अन्त में निस्सन्देह ऐसा करने से यही भावना निकलती क्योंकि ये पदार्थ कुछ ईश्वर के समान नहीं हैं जिस्से उसके गुणों का चेत पूजकों के मन में उत्पन्न करें बरन समस्त रीति से उसके ठीक बिरुद्ध हैं और इस कारण से ईश्वर को मन पर प्रकाश करने के बदले वे सचमुच उसको एक घूंघट की नाईं मन से छिपा रखते हैं निदान पूजक अवश्य

यह भावना करने लगता है कि ईश्वर इनके समान है बरन ये ही आप मेरे ईश्वर हैं इसके अनुसार जो कोई इस जगत के इतिहास से सज्ञान है से भली भांति जानता है कि जहां कहीं प्रतिमा की पूजा प्रचलित हो रही है उसका जो ही अर्थ आरम्भ में हुआ हो पर अन्त में उसका फल वही ठहरा जो मैं ने बतलाया। अब मुझको निश्चय है कि परमेश्वर के शास्त्र में कोई ऐसी आज्ञा जिस पर चलने से यही फल अवश्य निकलता है कधी नहीं होनेकी क्योंकि वह परमेश्वर के प्रत्यक्ष गुण के ठीक बिरुद्ध होती॥

फिर जो आप देवता गण के बिषय में कहते हैं मैं मान लेता हूं कि यदि सचमुच परमेश्वर के अवतार होते तो उनका भजन करना कुछ अनुचित न होता क्योंकि ईश्वर के अवतार का भजन करना ईश्वर ही का भजन करना है परन्तु उनके वृत्तान्त पर जो शास्त्रों में मिलता है तनिक ध्यान करना चाहिये क्योंकि यदि उनके बिषय में ऐसी २ बातें लिखी हैं जो परमेश्वर के प्रत्यक्ष गुण के बिरुद्ध हैं तो वे उसके अवतार क्योंकर हो सक्ते और वह शास्त्र जिस में ऐसा वृत्तान्त लिखा है परमेश्वर का शास्त्र क्योंकर हो सक्ता है और पहिले आप ब्रह्मा के उस वृत्तान्त पर जो भागवत में लिखा है ध्यान कीजिये जैसे भागवत के तीसरे स्कन्ध के बारहवें अध्याय में लिखा है॥

वाचं दुहितरं तन्वीं स्वयम्भूर्हरतीं मनः
अकामां चकमे क्षत्तः सकाम इति नः श्रुतम् ॥ २८ ॥
तमधर्मे कृतमतिं विलोक्य पितरं सुताः
मरीचिमुख्या मुनयो विस्रम्भात् प्रत्यबोधयन् ॥ २९ ॥
नैतत् पूर्वैः कृतं त्वद्य न करिष्यन्ति चापरे
यस्त्वं दुहितरं गच्छेरनिगृह्याङ्गजं प्रभुः ॥ ३० ॥

तेजीयसामपि ह्येतन्न सुश्लोक्यं जगद्गुरो
यद्वृत्तमनुतिष्ठन् वै लोकः क्षेमाय कल्पते ॥ ३१ ॥
तस्मै नमोभगवते य इदं स्वेन रोचिषा
आत्मस्थं व्यञ्जयामास स धर्म्मं पातु मर्हति ॥ ३२ ॥
स इत्थं गृणतः पुत्रान् पुरोदृष्ट्वा प्रजापतीन्
प्रजापतिपतिस्तन्वम् तत्याज व्रीडितस्तदा ॥ ३३ ॥

अर्थात् हे मैत्रेय । हमने ऐसा सुना है कि ब्रह्मा ने अपनी कृशांगी और मन हरनेवाली कन्या सरस्वती को यद्यपि उसे काम की वासना न थी तो भी आप काम के आधीन हो बुरे भाव से चाहा ॥ २८ ॥ तब उसके पुत्र मरीचि आदि मुनि पिता को कि जिसने अधर्म्म करने में मन किया था देख आजीव कर समझाने लगे ॥ २९ ॥ ऐसा काम आगे के लोगों ने न किया न कभी करेंगे जैसा तू काम के रोकने की सामर्थ रखके भी नहीं रोकता और कन्या से गमन किया चाहता है ॥ ३० ॥ हे जगत के गुरु तेजस्वी पुरुषों को भी कि जिनके आचार के अनुसार चलने से लोग कल्याण को पा सक्ते हैं यह काम यशदाई नहीं ॥ ३१ ॥ उस भगवान् को नमस्कार जो अपने तेज से इस जगत को जो उसी में बर्त्तमान है प्रकाशित करता है वही धर्म्म की रक्षा करे ॥ ३२ ॥ ब्रह्मा जो प्रजाओं के स्वामियों का भी स्वामी है पुत्रों को जो आप प्रजाओं के स्वामी थे अपने साम्हने ऐसा कहते देख कर लजाया और अपना शरीर छोड़ा ॥

वही प्रजापति जिसने ऐसा अपवित्र काम किया सो पवित्र मन मनुष्यों के भजने के क्योंकर योग्य हो सक्ता ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

कितने पण्डित कहते हैं कि उस कुकर्म का कर्त्ता ब्रह्मा सच-मुच परमात्मा नहीं है और इस कारण वह राग के वश में पड़ा ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

यह तो मैं कहता हूं पण्डितजी ऐसा कुकर्मी परमात्मा नहीं हो सक्ता परन्तु वह कैसा शास्त्र होगा जिसमें उसका ऐसा बखान लिखा है क्या ऐसी बातें परमेश्वर की पवित्रता के ठीक बिरुद्ध नहीं हैं। फिर दूसरी बात यह है कि उसी भागवत में कृष्ण का ऐसा बखान होता है कि वह परमात्मा आप ही है फिर भी उसी प्रकार के रागादि के आधीन था। उसका ऐसा वृत्तान्त है कि पूर्ण ब्रह्म का अवतार हो उसने अनगणित ऐसे अपवित्र कर्म किये ऐसे कर्मों का कर्त्ता पवित्र परमात्मा क्योंकर हो सक्ता और वह शास्त्र जिस में ऐसे कर्म परमात्मा पर लगाये जाते हैं मैं आप से पूछता हूं कि भले मनुष्य उसको परमेश्वर का शास्त्र क्योंकर मान सक्ते हैं। परमेश्वर ने किसी शास्त्र को जिस में ऐसे देवताओं के भजन की आज्ञा है कभी नहीं दिया। मेरे दृष्टान्त के तरुण ने तो सत्य बिचार किया कि यह बुरे अभिप्राय का पत्र मेरे पवित्र मन पिता ने कभी नहीं भेजा। इस रीति से शास्त्रों के बिषय में भी बुद्धिमान् और भले मनुष्य को निश्चय करना चाहिये ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

जो आपत्ति कृष्ण के बिषय में आप लगाते हैं भागवत में शुक ने पहिले से उसको दूर कर दिया है। जैसे भागवत के दशवें स्कन्ध के तेतीसवें अध्याय में ॥

राजोवाच ॥

संस्थापनाय धर्म्मस्य प्रशमायेतरस्य च
अवतीर्णोहि भगवानंशेन जगदीश्वरः ॥

स कथं धर्म्मसेतूनां वक्ता कर्त्ताऽभिरक्षिता
प्रतीपमाचरद् ब्रह्मन् परदाराभिमर्षणम् ॥
आप्तकामोयदुपतिः क्रुतवान् वै जुगुप्सितम्
किमभिप्राय एतन्नः संशयं छिन्धि सुब्रत॥

श्री शुकउवाच

धर्म्मव्यतिक्रमोदृष्ट ईश्वराणां च साहसं
तेजीयसां न दोषाय बन्हेः सर्वभुजो यथा ॥
नैतत्समाचरेज्जातु मनसापिह्यनीश्वरः
विनश्यत्याचरन् मौढ्याद् यथा ऽरुद्रोजुषन्विषम् ॥
ईश्वराणां वचः सत्यं तथैवाचरितं क्वचित्
तेषां यत् स्ववचो युक्तं बुद्धिमांस्तत्समाचरेत् ॥
कुशलाचरितेनैषामिह चार्थोन विद्यते
विपर्य्ययेण चानर्थो निरहङ्कारिणां प्रभो ॥
किमुताखिलसत्वानां तिर्यङ्मर्त्यदिवौकसाम्
ईशितुश्चेशितव्यानां कुशलाकुशलान्वयः ॥

अर्थात् राजा परीक्षित का वचन जगत के स्वामी भगवान् ने धर्म्म की भली भांति स्थापना और अधर्म्म के नाश के लिये अंश से अवतार लिया है ब्राह्मण जो धर्म्म रूपी सेतुओं का कहनेहारा बनानेहारा और रक्षा करनेहारा है उसने कैसा उलटा परस्त्री-प्रसङ्ग किया यदुकुल के स्वामी ने जिसकी इच्छा सदा परिपूर्ण थी घिनित कर्म किया इसका क्या अभिप्राय है हे बड़े नियमी इस सन्देह को तोड़िये ॥ शुक का वचन ॥ सामर्थवानों को धर्म्म के बिरुद्ध चलते और ढिठाई करते देखा है तेजस्वी लोगों को कुछ दोष नहीं जैसे अग्नि को जो सब बस्तुओं को भक्षण करता है जिसको सामर्थ्य नहीं है वह मन से भी कभी ऐसा काम न करे

यदि कदाचित् मूर्खता से करे तो नाश पावेगा जैसे रुद्र को छोड़ कोई बिष खावे। ईश्वरों का वचन सत्य है और कभी २ आचार भी सत्य रहता है परन्तु जो काम उनके वचन के अनुसार हो बुद्धिमान् को वही काम करना चाहिये क्योंकि उनको इस संसार में भला कर्म करने से कुछ लाभ नहीं और बुरा कर्म करने से कुछ घटी नहीं क्योंकि उनको कर्तृत्व का अभिमान नहीं है। जो ऐसी और सामर्थ्यवानों की बात है तो जो सब प्राणियों का अर्थात् तिर्यग्योनि मनुष्य और स्वर्गवासी आदि जितने परतन्त्र हैं उन सभों का ईश्वर है उसको कैसे भले बुरे का सम्बन्ध हो॥

सत्यार्थी का वचन॥

पण्डितजी। राजा का सन्देह शुक के इन बचनों से दूर नहीं हो सक्ता गीता में कृष्ण ने आप ही शुक का प्रमाण स्पष्ट रूप से खण्डन किया है जैसे गीता के तीसरे अध्याय में बीसवें आदि श्लोक हैं॥

कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः
लोकसङ्ग्रहमेवापि संपश्यन् कर्तुमर्हसि॥
यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरोजनः
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्त्तते॥
न मे पार्थास्ति कर्त्तव्यं त्रिषु लोकेषु किञ्चन
नानवाप्तमवाप्तव्यं वर्त एव च कर्मणि॥
यद्यहं हि न वर्त्तेय जातु कर्मण्यतन्द्रितः
मम वर्त्मानुवर्त्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः॥
उत्सीदेयुरिमे लोका न कुर्यां कर्म चेदहं
सङ्करस्य च कर्त्ता स्यामुपहन्यामिमाः प्रजाः॥

सक्ता: कर्मण्यविद्वांसोयथा कुर्वन्ति भारत
कुर्याद्विद्वांस्तथा ऽसक्तश्चिकीर्षुर्लोकसङ्ग्रहमिति ॥

अर्थात् जनक आदि कर्म ही करके सिद्धि को पहुंचे तुम को उचित है कि लोगों के उपकार के लिये कर्म करो । क्योंकि श्रेष्ठ जन जो २ कर्म करता है उस कर्म को सामान्य लोग करते हैं और वह जिस बात को प्रमाण मानता है लोग भी उसी के अनुसार चलते हैं । हे कुन्ती के पुत्र यद्यपि मुझे तीनों लोक में कुछ करना नहीं है और न कुछ पाना है जो मैं ने नहीं पाया तो भी कर्म कर्त्ता रहता हूं । क्योंकि यदि मैं आलस्य को छोड़ कदाचित् कर्म में न लगा रहूं तो हे कुन्ती के पुत्र सब मनुष्य जो मेरे पन्थ के अनुसार चलते हैं सो छितर बितर हो नष्ट हो जायंगे । जो मैं कर्म न करूं और सङ्कर का कारण हो इन प्रजाओं का बधक हो जाऊं । हे भरतबंशी जैसे अज्ञानी लोग लवलीन होके कर्म करते हैं तैसे ज्ञानी भी करें परन्तु उस में आसक्ति न रखके इस इच्छा से करें कि लोगों का उपकार होवे ॥

फिर भागवत के उन श्लोकों में जिनको मैं ने ब्रह्मा के वृत्तान्त दिखाने के लिये कहा मरीचि आदि उसके पुत्र प्रजापति पर दोष लगाते हैं । सो यदि तेजोमय ब्रह्मा काम से मोहित हो दोष के योग्य ठहरता तो कृष्ण की क्या सामर्थ्य है कि कुकर्म करके निर्दोषी ठहरे रघुवंश के कर्त्ता कालिदास ने जो कहा है सो इस प्रकरण में बुद्धिमान् ग्रहण करेगा जैसा रघुवंश के तीसरे सर्ग का तेतालीसवां श्लोक ॥

पथ: शुचेर्दर्शयितार ईश्वरा मलीमसामाददते न पद्धतिम्

अर्थात् पवित्र मार्ग के दिखानेहारे सामर्थ्यवन्त लोग मलिन

डगर पर नहीं चलते। यह वचन सत्य और यथार्थ है क्योंकि सब कोई जानता है कि किसी की चाल का उदाहरण उसकी शिक्षा से निपट गुणदायक है यद्यपि गुरु अपने चेले को भली भांति सिखावे कि व्यभिचार न करना जो गुरु आप वही कुकर्म करे तो क्या चेला उसकी शिक्षा का कुछ आदर करेगा ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

पण्डितजी। जब मनुष्य की बुद्धि ऐसी अति निर्बल है तो वह क्योंकर जान सक्ता है कि परमेश्वर को जिसकी अनन्त बुद्धि है क्या करना उचित है और क्या करना अनुचित है उसकी बुद्धि का गहराव तो अथाह है। वह सर्वज्ञानी है और मनुष्य उसको सम्पूर्ण रूप से जान नहीं सक्ता है संसारिक राजनीति में भी मन्त्री लोग कभी २ ऐसे उपाय करते हैं जो अज्ञान लोगों की समझ में नहीं आते हैं परन्तु ईश्वर का राज्य अनादि से और त्रिलोक की सम्पूर्ण सृष्टि के ऊपर फैल रहा है थोड़े दिनों के बुद्धिहीन मनुष्य उस राज्य के उपाय को क्योंकर समझ सक्ते ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

आपका वचन ठीक है मैं मान लेता हूं कि ईश्वर के राज्य में कितनी ऐसी बातें हैं जिनको हम सम्पूर्ण रूप से समझ नहीं सक्ते हैं इस प्रकार से सुकर्मियों के कष्ट और कुकर्मियों की भाग्यवानी पर दृष्टि करने से कभी २ मन अचंभित और व्याकुल हो जाता है यदि परमेश्वर सचमुच धर्म का राज्य करता है तो कर्मों का ठीक न्याय और प्रतिफल इस जीवन में भी क्यों नहीं होता सत्य पुरुष किस लिये वर्त्तमान काल में

आनन्द नहीं भोगते और दुष्टाचारी वर्त्तमान काल का दण्ड क्यों नहीं पाते ऐसे २ सन्देह तो मन में आते हैं परन्तु ध्यानी मनुष्य इसका यह उत्तर देता है कि यह जीवन परीक्षा का काल और यह संसार परीक्षा का स्थान है और परीक्षा के लिये दुःख और सुख कुकर्मियों और सुकर्मियों दोनों को मिलता है परलोक में जब परीक्षा हो चुकी तब एक २ को ठीक यथार्थ प्रतिफल दिया जायगा। इस रीति से परमेश्वर के सत्य न्याय और मनुष्य की अनियत दशा इन दो बातों पर एक ही संग ध्यान करने से एक दृढ़ अनुमान उत्पन्न होता है कि परलोक में इन सब बातों का ठीक बिचार होगा॥

परन्तु आप ध्यान कीजिये कि यह बिषय उस बात से जिसका वर्णन मैं ने किया बड़ा भिन्न है क्योंकि यद्यपि इसका अर्थ परलोक के बिचार से खुल भी नहीं सक्ता तथापि यह केवल एक ऐसी बात होती जो हमारी समझ में नहीं आसक्ती परन्तु देवतागण के चरित्र ऐसे नहीं हैं और परमेश्वर के प्रत्यक्ष गुण भी ऐसे नहीं हैं क्योंकि परमेश्वर ने मनुष्य जाति को एक बुद्धि दिई है जिस में भले बुरे का विवेक अटल है और जो सुकर्मों को इष्ट और कुकर्मों को अनिष्ट जानती है इस विवेकी बुद्धि के द्वारा हम जान सक्ते हैं कि परमेश्वर आप पवित्रमय है नहीं तो वह हमको ऐसी बुद्धि क्योंकर देता फिर उसी बुद्धि के द्वारा हम जानते हैं कि ब्यभिचार आदि कुकर्म दुष्ट हैं यदि कोई मनुष्य ऐसा कर्म करे तो निस्सन्देह समस्त भले मनुष्य उसको दुष्ट कहेंगे और उसको बिना दण्ड दिये छोड़ना बड़ा अन्धेर जानेंगे इस कारण भले मनुष्य के मन में यह भावना किसी प्रकार से नहीं आसक्ती है कि परमेश्वर अवतार लेके ऐसा कुकर्म करेगा क्योंकि हम स्पष्ट रूप

से देखके निश्चय जान सक्ते हैं कि यह बात परमेश्वर के प्रत्यक्ष गुण के ठीक विरुद्ध होती ऐसे भारी प्रकरण में पण्डितजी निश्चय हमको बड़ी दीनता के सङ्ग बात करना उचित है परन्तु यह वचन मैं बेधड़क कहता हूं कि जो कोई एक व्यभिचारी मनुष्य को ईश्वर कहता है सो ईश्वर की बड़ी अपनिन्दा करता है और जो कहते हैं कि परमात्मा ऐसा कुकर्म करेगा सो उसकी पवित्रता का भाव नहीं समझते हैं यह क्योंकर हो सक्ता है कि वह परमेश्वर जो मनुष्य जाति की शुद्धता और मन की पवित्रता चाहता है आप उनके सन्मुख ऐसे कुकर्मों का उदाहरण दिखावे इस कारण पण्डितजी आपको जो बुद्धिमान् और सत्यार्थी हैं कृष्ण को ईश्वर करके मानना किसी रीति से आगे को उचित नहीं हो सक्ता है और वह शास्त्र भी जिस में इस प्रकार का वृत्तान्त लिखा है निस्सन्देह ईश्वर का शास्त्र नहीं हो सक्ता है केवल दोषमान और पापमय मनुष्य की बनाई हुई पुस्तक है॥

वेदविद्वान् का वचन॥

जैसा कृष्ण का वृत्तान्त पुराणों में लिखा है वैसा ही महादेव आदिकों का बहुतसा वृत्तान्त मिलता है पुराणों के पढ़नेहारे यह सब भली भांति जानते हैं इस कारण इसका वर्णन करना कुछ प्रयोजन नहीं है यदि कृष्ण के ऐसे कर्मों से शास्त्रों की लौकिक उत्पत्ति सिद्ध होती है तो शिव आदिकों के वैसे ही कर्मों से वही परिणाम निकलेगा॥

सत्यार्थी का वचन॥

पण्डितजी। सत्य यह है कि पुराण के कर्त्ता जिन्हों ने ऐसे कुकर्म परमेश्वर पर लगाये उसकी पवित्रता को नहीं जानते थे।

अपने पाप मय स्वभाव के अनुसार मनुष्य जाति के गुण संयुक्त किसी बड़े तेजोमय और सामर्थी की भावना करके उन्हों ने उसको परमेश्वर कहा सो यह भी एक प्रसिद्ध लक्षण है जिस्से वेद आदि शास्त्रों की शिक्षा परमेश्वर के प्रत्यक्ष गुण के ठीक विरुद्ध देख पड़ती है ॥

अब इसके सम्बन्ध में एक और बात रह गई है जिस पर तनिक ध्यान करना चाहिये यदि परमेश्वर सचमुच कोई शास्त्र देवे तो निस्सन्देह उसका विशेष अर्थ यह होगा कि मनुष्य के पाप को किसी गुणदायक युक्ति के द्वारा दूर करे और उसके पाप मय स्वभाव को पवित्र करे अर्थात् मनुष्य का पाप नष्ट करके मनुष्य को उस पाप से और उसके दण्ड से और उसकी प्रबलता से बचावे। अब मैं आप से पूछता हूं कि इन कठिन कामों के निर्वाह करने के लिये वेद आदि शास्त्रों में कैसा उपाय और कैसी युक्ति वर्णित होती है। किसी स्थल में ऐसा लिखा है कि पापमय मनुष्य देवता का नाम अपने से अपने समस्त पाप से पवित्र हो सक्ता है जैसे विष्णु धर्म्मतन्त्र में लिखा है ॥

चक्रायुधस्य नामानि सदा सर्वत्र कीर्त्तयेत्
नाशौचं कीर्त्तने तस्य सपवित्रकरोयथा
हरिर्हरति पापानि दुष्टचित्तैरपि स्मृत:
अनिच्छयापि संस्पृष्टोदहत्यपि हि पावक इति ॥

अर्थात् चक्रायुध अर्थात् विष्णु के नाम सदा सर्वत्र लेते रहना उसके स्मरण करने से किसी प्रकार की अपवित्रता नहीं रहती है क्योंकि वह पवित्र करनेहारा है। यद्यपि दुष्टमन से उसका स्मरण किया जाय तो भी हरि पापों को हरता है क्योंकि यह प्रसिद्ध है कि बिन चाहना से भी यदि अग्नि से स्पर्श हो तो भी वह जलाय ही डालता है ॥

पण्डितजी। क्या ऐसी शिक्षा जैसी यह है सच्चे परमेश्वर की ओर से हो सक्ती है। क्या पाप अर्थात् परमेश्वर का अनादर करना उसकी आज्ञा का भङ्ग करना उस्से बैर करना जिसके कारण से मनुष्य इस संसार में दुःखित रहता है और अन्त को मर भी जाता है और परलोक के विलोकन करने से निपट डरता है। क्या यह पाप ऐसी हलकी वस्तु है कि निरे एकवचन के उच्चारण से मोक्ष हो सक्ता है यह शिक्षा तो मेरी समझ में साक्षात् मिथ्या है॥

फिर कितने एक स्थलों में यह भी कहा है कि गङ्गा स्नान करने से और तीर्थ को जाने से पाप मोचण हो सक्ता यह तो पण्डितजी एक निपट दुष्टमय शिक्षा है कि पाप के बिना छोड़े अथवा मन के बिना पवित्र किये कोई जन मुक्ति पा सक्ता है। यदि वे जो अपने कुकर्मों को नहीं छोड़ देते हैं फिर भी पाप मोचण पा सक्ते हैं तो कौन पाप को छोड़ेगा अथवा मन की पवित्रता कौन चाहेगा कौन धर्मी मनुष्य ऐसी भावना कर सक्ता है कि परमेश्वर जो मनुष्य के मन की पवित्रता चाहता है इस प्रकार की शिक्षा देगा ऐसा करना तो उसके प्रत्यक्ष गुण के ठीक विरुद्ध होना॥

वेदविद्वान् का वचन॥

आप जो वर्णन करते हैं सो शास्त्रों की ठीक शिक्षा नहीं क्योंकि दूसरे स्थलों में मन की पवित्रता की शिक्षा मिलती है॥

सत्यार्थी का वचन॥

पण्डितजी। मैं आपका कहना नहीं मुकरता हूं मैं जानता हूं कि शास्त्रों के दूसरे स्थलों में मन की पवित्रता की शिक्षा है

परन्तु इन स्थलों में जिनका वर्णन मैं कर चुका ऐसी शिक्षा नहीं मिलती है उन स्थलों का अभिप्राय स्पष्ट है कि निरे नाम जपने से अथवा निरे गङ्गा में स्नान करने से पाप मोचण हो सक्ता है और इसका तात्पर्य्य निस्सन्देह यह है कि पाप मोचण के लिये मन का पवित्र होना कुछ प्रयोजन नहीं और ऐसा भी साधारण लोगों से सर्वथा समझा जाता है सो ऐसी भिन्न २ शिक्षा में एक वई प्रकार की बिरुद्धता देख पड़ती है। यदि गङ्गा स्नान जप तप तीर्थ इत्यादि कर्मों से पाप मोचण हो सक्ता है तो मन का पवित्र होना क्या प्रयोजन है फिर यदि मन की पवित्रता अवश्य है तो गङ्गा स्नान जप तीर्थ इत्यादि से क्या लाभ है परन्तु यद्यपि शास्त्रों में मन की पवित्रता की शिक्षा मिलती तो है तथापि इसके प्राप्त करने के लिये कोई यथार्थ युक्ति वर्णित नहीं होती है। क्या गङ्गा स्नान करने से किसी का मन पवित्र हो जायगा कोई बुद्धिमान् ऐसी बात नहीं कहेगा फिर बिचारा मनुष्य उसी अपवित्र दशा में पड़ा रहता है और सम्पूर्ण हिन्दू शास्त्रों में कोई ऐसा योग्य उपाय नहीं पा सक्ता है जिसके द्वारा उसके किये हुए पाप कट जावें जिस्सें उनके दण्ड भोगने से छुटकारा पावे न कोई ऐसी युक्ति मिलती है जो उसका पापमय स्वभाव पवित्र करे जिस्सें आगे को पाप न करे। इन समस्त प्रमाणों से पण्डितजी मेरी समझ में यह बात सिद्ध है कि वेद आदि शास्त्रों की शिक्षा परमेश्वर के प्रत्यक्ष गुण के ठीक बिरुद्ध है तो ऐसे शास्त्रों में ईश्वरीय मत क्योंकर हो सक्ता है॥

ग्रन्यकर्ता का वचन॥

इतनी बात सुनते ही मैं ने देखा कि वेदविद्वान् का मुख गम्भीर और उदास दृष्ट पड़ता है परन्तु ध्यान करते २ उसने

उस समय सत्यार्थी के वचन का कुछ उत्तर नहीं दिया केवल यह कहा कि आप प्रसन्न हो तो हम सांझ काल एक और बार सत्सङ्ग करेंगे इस पर हम तीनों मनुष्य अपने २ घर को चले गये ॥

मतपरीक्षा का सातवां सत्सङ्ग समाप्त हुआ ॥

इति ॥

आठवां सत्सङ्ग ॥

वेदान्त आदि मतों की शिक्षा की चर्चा

ग्रन्थकर्ता का वचन ॥

सांझ काल जब वेदविद्वान् और सत्यार्थी अपना अन्तवाला सत्सङ्ग करने को इकट्ठे हुए तो मैं भी आगे की रीति उपस्थित था क्योंकि मैं ने यह समझा कि यदि वेदविद्वान् अपने शास्त्रों के प्रमाण सिद्ध करने के लिये और सत्यार्थी की आपत्तियों को तरक करने के निमित्त कुछ कहना चाहता है तो अभी कहना होगा और मैं उन प्रमाणों का जिनके हेतु ऐसा भला मनुष्य हिन्दू धर्म पर बिश्वास करके उसकी रीतों पर चलता है अभि-प्राय जानने का निपट अभिलाषी था जैसा मैं ने समझा था तैसा वेदविद्वान् वही इच्छा करके आया और बड़े आदर और गम्भीरता के सङ्ग इस प्रकार से बात करने लगा ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

पण्डितजी । आपने जो कुछ प्रमाण हिन्दू शास्त्रों को खण्डन करने के निमित्त बतलाया मैं ने धीरज करके सुनलिया है आप कहते हैं कि शास्त्रों का वृत्तान्त प्रमाणिक नहीं हो सक्ता है क्योंकि उनके सिद्ध करने के लिये साक्षी का बिश्वास योग्य बचन कहीं नहीं मिलता है फिर उनकी शिक्षा का तात्पर्य्य ईश्वर के प्रत्यक्ष गुण के समान नहीं है और उन में परस्पर बिरुद्धता आदि लक्षण देख पड़ने से निश्चय है कि वे केवल दोषी मनुष्य की रची हुई पुस्तकें हैं । ऐसे २ कारणों से आपकी समझ में

उचित नहीं है कि कोई मनुष्य ईश्वरवाणी की रीति उनका आदर करे अथवा मुक्ति के प्रकरण में उन पर बिश्वास लावे किम्वा उनकी धार्म्मिक रीतों पर चले। मैं मानलेता हूं कि यदि ईश्वर का और उसके गुणों का जो वर्णन आपने किया है सो निश्चय करके सिद्ध और प्रमाणिक हो सक्ता तो आपके दूसरे प्रमाणों का उत्तर देना एक अत्यन्त कठिन काम होता परन्तु आपको ज्ञान होगा कि वेदान्त मत के अनुसार जो कुछ आपने ईश्वर के विषय में कहा है सो किसी रीति से सिद्ध नहीं हो सक्ता क्योंकि उस मत की ज्ञानदशा में सम्पूर्ण जगत ब्रह्म स्वरूप एक रूप है और हिन्दू अङ्गरेज मुसलमान प्रभृति जाति भेद कुछ नहीं है क्योंकि सकल जीव ईश्वर ही के अंश हैं यही निर्वृत्तिमार्ग है और ज्ञानी लोग जानते हैं कि सकल जगत ईश्वर ही है (एको ब्रह्म द्वितीयोनास्ति) अर्थात् ईश्वर को छोड़ कुछ नहीं है और यह संसार और भिन्न २ जीव जो देख पड़ते हैं सो केवल माया के कारण ऐसे देख पड़ते हैं सचमुच कुछ पदार्थ है नहीं क्योंकि जब जीव में माया के बिकार से अहङ्कार मद मोह प्रभृति व्याप्त हुए तब ईश्वर से जीव भिन्न दिखाई देता है परन्तु जीव में से यह विकार जब चला जायगा तो ईश्वर से जीव का कुछ भेद नहीं रहेगा॥

फिर उस मत में दूसरा मार्ग प्रवृत्ति कहलाता है जो अल्पज्ञ लोगों के लिये स्थापित हुआ और इसके अनुसार भजन के मार्ग भिन्न २ हो सक्ते हैं परन्तु सभों का अभिप्राय एक ही है और ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त होने तक स्वस्व जात्यनुसार ईश्वर का भजन करते रहना मुक्ति हेतु है। और पुराणों की जो बिरुद्धता देख पड़ती है यह तो केवल धर्म्म के भिन्न २ मार्ग हैं और अन्त बिचार करने में सर्व पुराणों का मत एक ही है इस रीति से

जितने मत संसार में प्रचलित हैं और पाषण्ड मत भी सब के सब ईश्वर के सिरजे हुए हैं और किसी को मिथ्या कहना ईश्वर की अपनिन्दा करना है। आप ऐसा न जानिये कि मैं इस वेदान्त मत पर सम्पूर्ण भरोसा रखता हूं क्योंकि आपके ज्ञान पूर्वक सत्सङ्ग के कारण मेरे मन में कुछ सन्देह होने लगा है परन्तु जैसे मैं ने पहिले कहा शरीर विशेष वस्तुओं को अनर्थ-कर्त्ता को ध्यान करते २ मेरा मन बहुत दिनों से उस मत में अधिक सन्तुष्ट और प्रसन्न रहा है क्योंकि ऐसा देख पड़ता है कि उस मत के अनुसार जितनी बिरुद्धता और अज्ञानता और भ्रान्ति है जगत में फैल रही है सब की सब समान और सत्य ठहरती है और इस रीति से मन की सारी चिन्ता और सन्देह क्षण भर में दूर हो जाता है॥

सत्यार्थी का वचन॥

वेदान्त मत का जो वृत्तान्त आपने अभी किया है उसके एक वचन से मैं अति आनन्दित हूं अर्थात् कि आप उस मत पर सन्देह करने लगे हैं और मुझको निश्चय है कि जो कोई आपकी नाईं बुद्धिमान् और सत्यार्थी हो उस मत पर सीधे अन्तःकरण से ध्यान करेगा तो अवश्य अन्त में उसको सर्वथा मिथ्या जानेगा क्योंकि पण्डितजी बिचार किया चाहिये कि इस मत अर्थात् अद्वैत मत का क्या प्रमाण है अथवा कोई उसको किस हेतु से सत्य मानता है बुद्धि की रीति से तो प्रमाणिक नहीं हो सक्ता है क्योंकि बुद्धि की रीति से सकल मनुष्य पर साक्षात् है कि मैं ईश्वर से भिन्न हूं फिर जो कोई कहे कि माया के कारण बुद्धि की साक्षात् बात पर आसरा नहीं होसक्ता है तो मैं पूछता हूं कि इस दशा में उस बात पर जो साक्षात् नहीं है

बरन साक्षात् मिथ्या है आसरा क्योंकर हो सक्ता है यदि कोई कहे कि यह मत शास्त्र की शिक्षा से जाना जाता है तो मैं फिर पूछता हूं कि माया के वश में होके शास्त्र को अथवा उसके अर्थ को किम्वा उसके प्रमाण को कौन जान सक्ता है सचमुच इस मत का तात्पर्य्य यह है कि सत्य असत्य में कुछ भेद नहीं है तो वेदान्ती क्योंकर कह सक्ते हैं कि वेदान्त मत सत्य है और उसका गुण यह है कि असत्य को सत्य कहना और सत्य को असत्य ठहराना और बुद्धि का काम उलटी रीति से समझ लेना यदि कोई बात सत्य है तो निस्सन्देह वेदान्त मत मिथ्या है क्योंकि साक्षात् बात के बिरुद्ध है यदि कोई बात सत्य नहीं है तो वेदान्त मत भी सत्य नहीं है ॥

परन्तु आप मानलेते हैं कि सत्य और असत्य में बड़ा भेद है तो सत्य किस प्रकार से जाना जाता है निस्सन्देह किसी प्रमाण से सत्य बात सिद्ध होती है परन्तु सम्पूर्ण प्रमाणों की जड़ कोई साक्षात् बात होगी फिर जो साक्षात् बात पर भी आसरा नहीं हो सक्ता है तो प्रमाण लाने की क्या सामर्थ रही अथवा कोई बात क्योंकर सिद्ध हो सक्ती है फिर इस मत में अनेक ऐसी बिरुद्धता हैं कि किसी बुद्धिमान् का क्षण भर के लिये भी उस पर बिश्वास करना अत्यन्त आश्चर्य्य की बात है और जब लों अपनी बुद्धि के उंजियाले को बरबस अन्धकार न करे कोई उसको सत्य नहीं मान सकेगा परन्तु इस बिषय में एक पुस्तक वेदान्त मत बिचार नाम काशी के एक पण्डित की लिखी हुई मेरी समझ में अत्यन्त सुन्दर और ज्ञान पूर्वक है आपको चाहिये तो उसको मंगाके ध्यान के साथ पढ़ लेना और मैं जानता हूं कि निस्सन्देह आप उस मत की भ्रान्ति से तुरंत छूटेंगे कदाचित् आपके लिये जो सत्यार्थी हैं इतना भी करना

कुछ प्रयोजन नहीं क्योंकि जब कोई कहता है कि सत्य और असत्य उंजियाला और अन्धकार पाप और पुण्य दुःख और सुख सब एक ही है केवल भ्रान्ति से भिन्न देख पड़ते हैं तो ऐसा मनुष्य साक्षात् रीति से भ्रान्ति में यहां लों फंसा है कि बुद्धिमान् जो अपनी बुद्धि की खराई का अभिलाषी है उसकी किसी दूसरी बात सुनने भी नहीं चाहेगा और जब कोई कहता है कि पापमय निर्बल अज्ञान मनुष्य का जीव ईश्वर का अंश है केवल ईश्वर का वह अंश माया के वश में पड़ा है तो धर्मी मनुष्य ईश्वर की ऐसी निन्दापूर्वक और पाषण्डी बात सुनके निपट डरेगा ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

आप तो वेदान्त मत के विषय में बड़ी चेष्टा के सङ्ग बात करते हैं और निस्सन्देह यदि सत्य नहीं है तो अवश्य वह मत मनुष्य के लिये निपट हानि जनक और परमेश्वर के लिये अत्यन्त निन्दा पूर्वक है क्योंकि जितना पाप और भ्रमणा और पाषण्ड इत्यादि मनुष्य से उत्पन्न हुए उन सभों का दोष ईश्वर ही पर लगाना और जैसा आप कहते हैं मैं नहीं देखता हूं कि उसी मत की शिक्षा के अनुसार वह मत क्योंकर सत्य और प्रमाणिक ठहर सक्ता है क्योंकि यदि सब कुछ माया है तो वह भी मायिक होगा ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

आपका कहना ठीक है और मैं आप से बिन्ती करता हूं कि जैसे आप ईश्वर को प्रसन्न करने और सत्य बात और तत्वज्ञान प्राप्त करने चाहते हैं तैसे उस मत के सिद्धान्त पर जो सम्पूर्ण

अमथा ही है किसी रीति से तनिक भी विश्वास न कीजिये सच्ची बुद्धि और विवेक की शिक्षा यह है कि वह जिसको सारे बुद्धि-मान् परमात्मा करके मानते हैं सो चैतन्य हो सम्पूर्ण जगत का सृष्टिकर्त्ता पालनकर्त्ता और स्वामी है। मनुष्य जाति की स्वाभाविक प्रकृति और सारे पदार्थों के गुण केवल उसी की इच्छा से उत्पन्न हुए और किसी रीति से नहीं इस कारण पृथक् २ मनुष्य की व्यक्ति का जो स्वाभाविक ज्ञान है सो एक अकस्मातीय अथवा व्यर्थ बात नहीं है परन्तु परमात्मा ही की इच्छा से सब किसी के मन में उत्पन्न हो अटल रहता है परन्तु जो कुछ जगत का स्वामी परमात्मा करता है सो किसी भले और योग्य अभिप्राय के लिये करता है। त्रिलोक का सर्वज्ञानी और सर्वसामर्थी महाराजा क्षुद्र मनुष्य के समान व्यर्थ लीला क्रीड़ा के लिये कुछ नहीं करता है। वह तो नित्य शुद्ध बुद्धि मुक्ति स्वभाव नित्या-नन्द और निर्विकार है और मनुष्य की नाईं अपनी प्रजाओं को कभी धोखा नहीं देता है। दुःख सुख आदि जो मनुष्य इस जीवन में सहते हैं सो पण्डितजी सब सत्य और परमात्मा के ठहराये हुए हैं। सब कोई साक्षात् रीति से जानता है कि मैं दूसरों से भिन्न हूं यह मेरा सेवक है वह मेरा स्वामी इत्यादि कोई ऐसी भावना नहीं करता है कि जो कुछ मेरे मन में आवे सो मैं कर सक्ता हूं क्योंकि मेरा कोई स्वामी नहीं है और राजा प्रजा का कुछ भेद नहीं है यद्यपि कोई ऐसी व्यर्थ भावना भी करता तथापि इस संसार में उस पर चल नहीं सक्ता और जो ऐसा उद्योग करता तो अपनी आयु निर्वाह नहीं कर सक्ता यदि कोई प्रजा अपने जीव को राजा के जीव से एक ही जान अपनी इच्छा पर चल राजा की आज्ञा उल्लङ्घन करता तो क्या राजा उसको दण्ड के लिये पकड़ न लेता और जब उसको कोड़े से

मरजाता तो क्या उस प्रजा का दुःख सत्य नहीं होता। अब इस संसार में राजा प्रजा का सम्बन्ध परमात्मा का ठहराया हुआ है और वही आप सभों का महाराजा और स्वामी है और मृत्यु काल लों यही सम्बन्ध अटल रहता है तो किस प्रमाण से सिद्ध अथवा सम्भव हो सक्ता है कि यही सम्बन्ध परलोक में भी स्थिर नहीं रहेगा ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

आप जो कहते हैं सो सब ठीक है और एक और बात भी है जिसके कारण से मेरे मन में वेदान्त मत का कुछ सन्देह हो रहा है अर्थात् वह जो अपने को परमात्मा से भिन्न नहीं जानता है तो उसका भजन क्यों कर सक्ता परन्तु जिसके आधीन सकल मनुष्य हैं चाहिये कि उसका भजन समस्त बुद्धि-मानों से निरन्तर होता रहे। इस प्रकार से वेदान्त मत त्रिलोक के स्वामी के उचित भजन के विरुद्ध देख पड़ता है तो ऐसा मत परमात्मा से क्योंकर निकले यह तो एक सन्देह मेरे मन में बहुत दिनों से आ रहा है ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

सच पण्डितजी समस्त धर्म्ममय पुरुषों के मन में यही सन्देह अवश्य आवेगा क्योंकि अपने २ आत्मत्व का ज्ञान जो मनुष्यों के मन में स्वाभाविक है सो इसी हेतु से परमात्मा ने ठहराया कि एक २ की मन की अगुवाई करके उसको परमात्मा के भजन में तत्पर करे। जो कोई इस अगुवाई को त्याग करता है सो भूल करके परमात्मा के दिखाये हुए मार्ग से भटक जाता है और अपने कल्पे हुए मार्ग पर चलके अपने अभिप्राय को

बिना प्राप्त किये भ्रम के अन्धकार में सदा सर्वदा ठोकर खाता गिरता पड़ता रहेगा इस कारण पण्डितजी वेदान्त के इस अन्धकार मय सिद्धान्त को त्याग करके अपने निज आत्मत्व के स्वाभाविक ज्ञान पर अटल और दृढ़ बिश्वास धरिये ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

साङ्ख्य और न्याय शास्त्रों में द्वैत मत अर्थात् भिन्न २ जीव की निज व्यक्ति की शिक्षा है परन्तु इस रीति से कि समस्त आत्मा अनादि और नित्य है आप इस शिक्षा को कैसा जानते हैं ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

मेरी समझ में पण्डितजी यह शिक्षा कि परमात्मा को छोड़ कोई आत्मा नित्य और अनादि है सो वृथा निष्प्रमाण है कोई इस बात का स्मरण नहीं कर सक्ता है कि इस जन्म से पहिले किसी काल में मैं जीता था परन्तु यदि मनुष्य की आत्मा पहिले से जीती थी तो अपने प्रथम जीवन के स्मरण क्यों नहीं कर सक्ते हैं ऐसा स्मरण न होने से मनुष्य की आत्मा की नित्यता निषप्रमाण ठहरती और इसके सिद्ध करने के लिये बुद्धि का कोई और प्रमाण उपस्थित नहीं है क्योंकि वह बात जो प्रमाण की रीति कितने लोग कहते हैं अर्थात् कि इस जन्म का दुःख किसी पहिले जन्म के पाप का दण्ड है किसी प्रकार से सिद्ध नहीं हो सक्ता है यदि ऐसे पाप का दण्ड होता तो क्या उस पाप का स्मरण भी नहीं रहता जिससे दण्ड ग्राहक उस पाप से पछतावे ऐसी अन्धी रीति से दण्ड देना सर्वथा निष्फल और वृथा ठहरता जो सर्वज्ञानी परमात्मा के योग्य नहीं हो सक्ता। इसके अनुसार आवागमन की शिक्षा अप्रमाणिक और एक रीति

से निपट हानिजनक भी ठहरती क्योंकि अनेक जन्मों का आसरा करके जिन में अपने पापों का दण्ड भोग अन्त को मुक्ति पावे बहुतेरे मनुष्य इसी जन्म में पाप करते रहते हैं सो मेरी समझ में यह समस्त शिक्षा बुद्धि के बिरुद्ध और मनुष्य के स्वाभाविक सुधराव के प्रतिकूल है ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

नैयायिक कहते हैं कि परमाणु जिन से सृष्टि उत्पन्न हुई अनादि हैं और कपिल मानता है कि प्रकृति अनादि है आप इन बातों का कैसा बिचार करते हैं ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

पण्डितजी। मेरी बुद्धि में ऐसा आता है कि परमात्मा को छोड़ कोई बस्तु अनादि नहीं है इन दो पन्थों के कर्त्ता और बेदान्ती भी ऐसा मानते थे कि परमात्मा को शून्य और नास्ति से सृष्टि को उत्पन्न करने की सामर्थ्य न थी इस कारण वेदान्ती कहते हैं कि परमात्मा ने अपने को पसारके जगत को बनाया और यों सम्पूर्ण जगत ब्रह्म स्वरूप है परन्तु नैयायिक कहते हैं कि ऐसा नहीं। ईश्वर ने अनादि परमाणु से जगत को बनाया इस में इनकी यह सम्मति देख पड़ती है कि ईश्वर जगत को शून्य से नहीं बना सक्ता है परन्तु यह भावना सर्वथा निष्प्रमाण है क्योंकि परमात्मा जिसको सारे बुद्धिमान् नित्य और स्वयंभू मानते हैं सो निस्सन्देह सर्व सामर्थी भी होगा परन्तु यदि सर्व सामर्थी है तो शून्य से जगत को बनाना उसके लिये क्या बड़ी बात होती वे पण्डित जो उस नित्य स्वयंभू ही की सामर्थ्य का अन्त पा नहीं सक्ते हैं तो उसकी सामर्थ्य पर सीमा क्योंकर

बांधते हैं और वेदान्तियों की यह भावना कि ब्रह्म ने अपने को पसारके जगत बनाया सो किसी प्रकार से बुद्धि में नहीं आती है क्योंकि जितने पदार्थ दृश्यमान और स्पर्श के योग्य हैं सो न तो आत्मस्वरूप हैं और न चैतन्य हैं और क्योंकर हो सके कि चैतन्य और निर्विकार परमात्मा एक जड़ पदार्थ और अनात्मिक बस्तु बन जावे ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

न्याय आदि शास्त्रों में यह सिद्धान्त है कि राग आदि भावों के बिना नाश किये सिद्धि नहीं हो सक्ती है। क्या आपकी समझ में यह शिक्षा यथार्थ है कि नहीं ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

नहीं पण्डितजी मेरी बुद्धि के अनुसार यह शिक्षा भी यथार्थ नहीं है परन्तु भ्रान्ति से उत्पन्न हुई क्योंकि निरे राग आदि भावों में कुछ दोष नहीं है दोष केवल यह है कि राग आदिकों को अनुचित रीति पर अभ्यास और साधन करना और परमात्मा के किसी प्रत्यक्ष कार्य्य पर दोष लगाना निस्सन्देह उसकी अपनिन्दा और बड़ी पाखण्ड की बात है परन्तु राग आदि तो परमात्मा के प्रत्यक्ष कार्य्य हैं क्योंकि मनुष्य की प्रकृति के स्वाभाविक गुण हैं कुछ मनुष्य की कल्पी हुई बात नहीं है और परमात्मा ने रागआदि को किसी योग्य अभिप्राय के लिये ठहराया होगा। इस जगत के सृष्टिकर्ता ने राग आदिकों के निमित्त कोई योग्य और उचित बिषय भी बनाया होगा और मनुष्य को चाहिये कि अपने राग आदिकों को जैसे प्रेम इच्छा द्वेष इत्यादि अपने २ योग्य और यथार्थ बिषयों पर लगावे और

एक २ को अपने २ भाव और पदवी के समान साधन करे। सब से श्रेष्ठ बिषयों को सब से अतिशय अभिलाषा के सङ्ग चाहना चाहिये परन्तु जो २ बिषय उन से न्यून है न्यून अभिलाषा के साथ चाहना योग्य है। धन से तो ज्ञान श्रेष्ठ है और ज्ञान से शुद्धता श्रेष्ठ है। इस कारण धन को न्यून अभिलाषा से ज्ञान को अधिक अभिलाषा से परन्तु मन की शुद्धता को सब से अत्यन्त अभिलाषा से खोजना चाहिये। फिर समस्त बिषयों में परमात्मा सब से श्रेष्ठ है इस कारण सब से अतिशय प्रेम और इच्छा के सङ्ग उसका खोज करना चाहिये। संसार के जितने पदार्थों की अभिलाषा मन करता है उनके प्राप्त किये पर भी मन सम्पूर्ण रूप से सन्तुष्ट नहीं होता है क्योंकि परमेश्वर को छोड़ कोई बिषय उपस्थित नहीं है जो मनुष्य जाति के मन को सम्पूर्ण रूप से शान्ति अथवा सन्तोष देवे। बिश्वास प्रेम आदर ऐसे २ राग जिनका योग्य बिषय परमात्मा आप ही है सो मनुष्य की प्रकृति के स्वाभाविक गुण हैं और परमात्मा के प्रत्यक्ष गुण जैसे सत्यता दया पवित्रता महिमा इत्यादि सो इन्हीं रागों के ठीक और यथार्थ बिषय हैं। इस दशा में क्या सन्देह हो सक्ता है कि परमात्मा ने मनुष्य जाति में इन गुणों को अपनी ही सेवा के लिये उत्पन्न किया और इनको इस रीति से साधन करना परमात्मा को इष्ट है परन्तु वे जो इस बात से निश्चिन्त हो अपने राग आदिकों को नाश करने चाहते हैं सो परमात्मा की इच्छा के बिरुद्ध करते और एक प्रकार के आत्मघातक ठहरते मानो वे अपनी प्रकृति के उत्तम अङ्ग को काट डालते हैं हीनाङ्ग मनुष्य जिसके हाथ कट गये हैं वह काम नहीं कर सक्ता है जो हाथों से किया जाता है इसी रीति से जो राग आदि को नाश करने चाहता है परमात्मा की वह

सेवा नहीं कर सक्ता है जो राग आदिकों से होती है। इसके अनुसार ऐसे मनुष्य अन्त में अचेत मूढ़ असामर्थी बन जाते हैं क्योंकि वे परमात्मा के बनाये हुए अपने स्वाभाविक गुण को बिगाड़ डालते हैं ऐसा करना तो किसी प्रकार से उचित नहीं हो सक्ता है परन्तु राग आदिकों को अपने २ योग्य यथार्थ विषयों पर लगाके उचित और क्रमी भाव के साथ साधन करना जिससें अपनी प्रकृति की सिद्धि को प्राप्त करें यही उचित है क्योंकि जिस प्रकार से इस जीवन में रागआदिकों के योग्य और सब से श्रेष्ठ विषय परमात्मा है उसी रीति से परलोक में भी सदा सर्वदा रहेगा॥

वेदविद्वान् का वचन॥

आपने जो वर्णन अभी किया है सो केवल प्रेम इच्छा आदर ऐसे २ रागों के विषय में है परन्तु मनुष्य के स्वभाव में द्वेष घिन क्रोध भी है क्या इनको भी किसी प्रकार से साधन करना चाहिये॥

सत्यार्थी का वचन॥

निस्सन्देह पण्डितजी इनके भी यथार्थ और योग्य विषय इस पापमय जगत में बहुत हैं सम्पूर्ण मनुष्यों को चाहिये कि मिथ्यता से द्वेष करना अपवित्रता से घिन करना और पाप से क्रोध करना ऐसा नहीं कि किसी मनुष्य से जितना मिथ्या अपवित्र पापी हो द्वेष अथवा क्रोध करना उचित है क्योंकि हम सब के सब पापी हैं और पाप इत्यादि मनुष्य जाति के कुछ स्वाभाविक गुण नहीं हैं केवल उस जाति की एक अति बुरी दशा है। मनुष्य जाति के प्रकृति सिद्ध गुण तो उस्से भिन्न हैं

और परमात्मा के अनुग्रह से उससे सर्वदा अलग हो सक्ता है इस कारण पापी मनुष्य पर क्रोध करना नहीं चाहिये परन्तु उसके और अपने भी पाप और मिथ्यता और अपवित्रता से जितना द्वेष और घिन हो सक्ता है उतना करना निस्सन्देह बहुत उचित और परमात्मा को इष्ट भी है परन्तु यह भी उस रीति से करना नहीं चाहिये जिस रीति से बैरागी और योगी करने को कहते हैं अर्थात् संसार से भागके निर्जन स्थान में रहना और बनवासी होजाना क्योंकि यह तो मनुष्य ही से द्वेष और घिन करना है जो किसी रीति से उचित नहीं हो सक्ता है मनुष्य जाति से प्रेम करना चाहिये और उनका उपकार करना और सामर्थ भर अपनी २ उस अवस्था में जिसे परमेश्वर ने एक २ के लिये ठहराया है उनका उपयोग करना उचित है जितना घिन और द्वेष उनके पाप से और अपने पाप से हम करें फिर भी उस पाप के नाश करने के लिये संसार की उसी अवस्था में जिसे परमात्मा ने ठहराया है उपस्थित रहना अवश्य है नहीं तो हम परमात्मा के ठहराये हुए नियम को उलटा देते और अपने भाइयों के उपकार से हाथ उठाते और अपनी योग्य और यथार्थ परीक्षा से भी भाग जाते और ऐसा करके हम अपनी प्रकृति की सिद्धि को क्योंकर प्राप्त कर सक्ते हैं दुष्ट से भाग जाना तो उसको जीत लेना नहीं है परन्तु उसको दबाके नाश करना यही तो जय है जो संसार से भागके निर्जन स्थान में रहने का मन करता है सो अपनी हार मान लेता है और फिर भी अपने मन ही मन में अपने सङ्ग वही दुष्ट लिये जाता है ॥

अब पण्डितजी हिन्दू शास्त्रों के और उनकी शिक्षा के विषय में जितना मैं कहने चाहता था सो कह चुका हूं जो

कुछ मैं ने कहा है से आपके मन के दुःखी करने की इच्छा से कुछ भी नहीं कहा मेरी इच्छा केवल यह थी कि भर शक्य सत्य बात को और उसके यथार्थ प्रमाणों को आप पर प्रकाश करूं क्योंकि मैं भली भांति जानता हूं कि केवल सत्य बात से सकल मनुष्यों का कल्याण हो सक्ता है। मेरी यह समझ थी कि जैसा मेरा निज वृत्तान्त आपके वृत्तान्त से कितनी बातों में भेद हो रहा है तैसे कितनी बातों का ज्ञान मेरे पास था जिनका यथार्थ सन्देश आपके पास नहीं हुआ होगा इस कारण यद्यपि मैं जानता था कि इनके सुनने से जो पहिले आपको कुछ दुःख होवे तो कुछ आश्चर्य्य नहीं तथापि मैं ने सोचा कि सच्ची मित्रता का एक प्रसिद्ध लक्षण यह है कि अपने मित्र के अनन्त कल्याण के लिये उसको थोड़े दुःख देने पर प्रसन्न हो जो अकस्मात् मेरे मुख से कोई ऐसी बात अनुचित निकली हो जिस्से आपको निष्फल दुःख हुआ तो दया करके क्षमा कीजिये और मेरे मन की सीधी अभिलाषा पर ध्यान रखिये। अब जो कुछ मेरे वर्णन के उत्तर में आप कहने चाहें मैं बड़े आनन्द के साथ सुन लूंगा॥

वेदविद्वान् का वचन॥

मैं जानता हूं पण्डितजी कि आपकी इच्छा मुझको दुःख देने की नहीं थी और आपने केवल प्रेम पूर्वक वचन कहा है आपकी किसी बात को क्षमा करना प्रयोजन नहीं है फिर भी अपने शास्त्रों के और अपने धर्म्म के खण्डन पूर्वक प्रमाण सुनने से निस्सन्देह मुझको दुःख हुआ और मेरा सब से बड़ा दुःख यह है कि जो मैं निर्पक्ष होके सत्य वचन कहूं तो आपके प्रमाणों का यथार्थ उत्तर मैं दे नहीं सक्ता हूं इस दशा में क्या आश्चर्य्य

है कि मेरा मन अत्यन्त दुःखित होवे यदि इस देश के सम्पूर्ण शास्त्र निष्प्रमाण हैं तो अपने मन की व्याकुलता दूर करने के लिये मैं तत्वज्ञान को कहां से पासकूं ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

हे मित्र । यदि कोई शास्त्र जो इन दो प्रमाणों से सिद्ध होवे कहीं देखने में आवे तो निस्सन्देह बिश्वास योग्य होगा अर्थात् कि शास्त्र की शिक्षा और अभिप्राय परमेश्वर के प्रत्यक्ष गुण के योग्य और मनुष्य जाति की मानसिक शुद्धता के उपकारक होवे यही पहिला प्रमाण है । फिर उस शास्त्र के प्रचारक में दैवीय शक्ति का साक्षी के बिश्वास योग्य वचन से सिद्ध और प्रमाणिक होना यह दूसरा प्रमाण है । यदि कोई ऐसे शुद्ध अभिप्राय शास्त्र का प्रचारक कहे कि इसके सिद्ध करने के लिये मेरे पास दैवीय शक्ति है तो उसके वचन की परीक्षा किई जावे और यदि निर्णय करने पर सिद्ध होवे तो वह शास्त्र निस्सन्देह दैवि और बिश्वास योग्य ठहरेगा यदि ऐसा शास्त्र पूर्वकाल के प्रमाणिक और बिश्वास योग्य वृत्तान्तों से सिद्ध होवे तो बुद्धिमान् उसकी परीक्षा करे और यदि मनुष्य जाति के लिये मुक्ति का यथार्थ मार्ग उस में वर्णित होवे तो समस्त मुक्ति के खोजक उसको ग्रहण करके उस पर चलें ॥

वेदविद्वान् का वचन ॥

क्या आपके पास किसी ऐसे शास्त्र का समाचार है जो इन दो प्रमाणों से सिद्ध हो सक्ता है ॥

सत्यार्थी का वचन ॥

वह शास्त्र जिसका पूर्वकाल में यशू मसीह अर्थात् यशू ख्रिस्त प्रचारक था इन दो प्रमाणों से सिद्ध होता है उस में कुछ भी

ऐसा तात्पर्य्य अथवा वृत्तान्त कहीं नहीं देख पड़ता है जो परमेश्वर के अयोग्य किम्वा उसके प्रत्यक्ष गुण के बिरुद्ध है। उसका सम्पूर्ण अभिप्राय मनुष्य की शुद्धता के अनकूल और उपकारक है अनेक दृढ़ प्रमाणों से सिद्ध है कि यसू ख्रिस्त जो इस शास्त्र का प्रचारक था दैवीय शक्ति रखता था बरन वह आप ईश्वर का अवतार था उसके चरित्रों के साक्षी अर्थात् देखनेवालों ने उस ही काल उन चरित्रों का सम्पूर्ण वृत्तान्त पुस्तकों में लिखा और अनेक प्रत्यक्ष लक्षणों से यह भी सिद्ध किया कि समर्थ और बिश्वस्त पुरुष हो बिश्वास योग्य साक्षी हैं अर्थात् कि उस वृत्तान्त के बिषय में उनका धोखा खाना अनहोना था और दूसरों को धोखा देने का उनको कुछ अभिप्राय नहीं हो सका। उनकी पुस्तकें उसी काल से संसार में प्रचलित हो रही हैं और इस बात का प्रमाण उसी काल से आज लों सनातन के दूसरे ग्रन्थकर्त्ताओं के बिश्वास योग्य वचन से सिद्ध होता है। उन साक्षियों की वे ही पुस्तकें आज लों उपस्थित हैं और उस मत के शिष्य उनको निरन्तर पढ़ते हैं। उस शास्त्र के प्रचारक ने संसार के पाप के प्रायश्चित्त अपनी मृत्यु से कर और तीसरे दिन मृत्यु जय हो समाधि में से जी उठ अपने शिष्यों को आज्ञा दिई कि मुझ पर बिश्वास लाने से पाप मोचण और मुक्ति का मङ्गल समाचार समस्त जातिगणों को प्रचारो। ऐसे २ अनेक दृढ़ प्रमाणों से सिद्ध है कि यसू ख्रिस्त का वही शास्त्र सारे देशों के सम्पूर्ण जातिगणों से ग्रहण होने के योग्य है बरन यह वही शास्त्र है जिसे दया सागर सर्वज्ञानी परमात्मा ने अपने प्रिये सन्तान अर्थात् दुःखी और भटकी हुई मनुष्य जाति की मुक्ति के लिये ठहराया है परन्तु इस समय में आपके लिये इस बात का वर्णन बिस्तार के साथ नहीं कर सक्ता हूं ईश्वर की इच्छा हो तो आसरा है कि कोई दूसरे

समय सत्सङ्ग कर आपके लिये उस दैवीय शास्त्र का अर्थ और प्रमाण भी बतलाऊं इतने में आप परमात्मा से प्रार्थना करते रहिये कि उसके अनुग्रह से आपका मन निष्पक्ष हो उस शास्त्र का समाचार सुनने पर सिद्ध होवे क्योंकि उस में अनन्तजीवन का वचन है ॥

ग्रन्थकर्त्ता का वचन ॥

इतनी बात सुनते ही वेदविद्वान् आदर के साथ सत्यार्थी को प्रणाम कर बिदा हुआ और हम सब अपने घर को चले गये। इसके कुछ बिलम्ब के पीछे उन दो महा पण्डितों का फिरके सत्सङ्ग हुआ और सत्यार्थी ने वेदविद्वान् के लिये उस दैवीय ख्रिस्तीय शास्त्र के अर्थ और प्रमाण का सम्पूर्ण वर्णन किया। उस काल में भी उपस्थित था और उनके प्रश्नोत्तर का वृत्तान्त इस मत परीक्षा नाम पुस्तक के द्वितीय खण्ड में लिखा है। अब मैं इसके सारे पढ़नेवालों से बिन्ती करता हूं कि उस द्वितीय खण्ड को भी मंगाके पढ़िये तब इस भारी प्रकरण का सारा बिस्तार प्रगट हो जायगा। प्रणाम ॥

मतपरीक्षा का प्रथम खण्ड समाप्त हुआ ॥

इति ॥

A. Sch